चन्दामामा
जनवरी १९७१
75 P

चन्दामामा

जनवरी १९७१

फॉस्फ़ोमिन से
- बल और उत्साह बढ़ता है
- भूख बढ़ती है
- अधिक काम करने की शक्ति प्राप्त होती है
- शरीर की रोगप्रतिरोध-क्षमता बढ़ती है

SQUIBB® ⊤⊤⊤®
SARABHAI CHEMICALS

® ई. आर. स्क्विब एण्ड सन्स इन्कॉर्पोरेटेड का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है। करमचन्द प्रेमचन्द प्राइवेट लि. को इसे उपयोग करने का लाइसेन्स प्राप्त है।

फलों के ज़ायकेवाला,
हरे रंग का विटामिन
टॉनिक — फॉस्फ़ोमिन

Shilpi HPMA-35A/70 Hin

8

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
पाठकों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अगले मास से चन्दामामा की सिलाई पार्श्व की न होकर मध्य की सिलाई होगी। यह प्रबंध मुद्रणालय की सुविधा के हेतु किया गया है, साथ ही चन्दामामा को पहले की अपेक्षा शीघ्र वितरित करने में सहूलियत होगी। अतः मुद्रण की यह सुविधा पाठकों के पास शीघ्र चन्दामामा भेजने में भी सहायक होगी। आशा ही नहीं एवं पूर्ण विश्वास है कि हमारे प्रिय पाठकों को यह प्रबन्ध प्रसन्नता का विषय होगा।
वर्ष : २३ जनवरी १९७१ अंक : ५
CHITRA

भोली औरत

एक गाँव में एक शिल्पी था। उसके दो बेटे थे। दोनों शादी-शुदा थे। शिल्पी की पत्नी अपनी छोटी बहू कनकांगी से ज्यादा प्रेम करती थी। कनकांगी भी अपनी सास के प्रति श्रद्धा और भक्ति रखती थी। बड़ी बहू शारदा सास के प्रति लापरवाही दिखाती थी।

कुछ समय बाद शिल्पी की पत्नी का देहांत हो गया। शिल्पी ने उसकी आदमक़दवाली मूर्ति बनाकर घर के एक कोने में रख दी। कुछ और दिन बाद शिल्पी की भी मौत हो गयी। सास और ससुर के मर जाने से घर की बहुओं में छोटी-मोटी बातों पर झगड़ा होने लगा। इसलिए भाइयों ने अपने घर को बांट लिया और अलग रहने लगे। घर के दोनों भागों के बीच एक कमरा था जिसमें शिल्पी की पत्नी की मूर्ति रख दी गयी।

उस मूर्ति की ओर दोनों भाइयों ने कभी ध्यान न दिया। बड़ी बहू शारदा ने भी कभी उस कमरे में क़दम न रखा, उल्टे उस ओर का किवाड़ बंद कर दिया। पर छोटी बहू कनकांगी उस मूर्ति को अपनी सास ही समझकर रोज़ उसे प्रणाम करती, उस पर फूल चढ़ाकर कहती– "सासजी, मुझे आशीर्वाद दीजिये।" वह जो कुछ करना चाहती, पहले उस मूर्ति को सुनाकर ही करती–"सासजी, आज आपके पसंद की तरकारी बनाती हूँ।"

कनकांगी बड़ी भोली थी। उसके भोलेपन की कोई हद न थी। एक दिन उसने अपनी सास की पसंद की रसोई बनाई। मूर्ति के सामने एक पत्तल में सारी चीज़ें परोसकर बोली–"सासजी, आप भोजन कीजिये। वरना मैं भी नहीं खाऊँगी।" वह हठ करके बैठ गयी।

बड़ी बहू किवाड़ के उस पार से यह दृश्य देख रही थी। उसने कहा–"सासजी कहीं सबके सामने भोजन करेंगी? घड़ी भर उनको अकेले क्यों नहीं छोड़ती?"

"ठीक ही तो कह रही है।" यह सोचकर कनकांगी ने अपने घर की तरफ़ का किवाड़ बंद किया और अपने काम में निमग्न हो गयी। मौक़ा पाकर शारदा उस कमरे में आयी। पत्तल में परोसे गये सारे पदार्थ लेकर अपने घर में चली गयी।

घड़ी भर बाद कनकांगी ने मूर्तिवाले कमरे में जाकर देखा। पत्तल एक दम खाली था। उसने सोचा कि सचमुच सास ने खाना खा लिया है। उस दिन से लेकर वह रोज़ सास की मूर्ति के सामने पत्तल में खाना परोसती, "खाना खाइये सासजी" बताकर किवाड़ बंद करके चली जाती। घड़ी भर बाद आकर देखने से पत्तल ख़ाली दिखाई देता।

कनकांगी के पति ने एक दिन इस दृश्य को देखा। उसने अपनी पत्नी से पूछा–"तुम पागल तो नहीं हो गयी? कहीं पत्थर की मूर्ति खाना खाती है?"

"सासजी रोज भोजन करती हैं। आप ख़ुद देख लीजिये।" कनकांगी ने कहा।

कनकांगी के पति ने किवाड़ की दरार में से देखा। दूसरे भाग से उसकी भाभी आयी और पत्तल में परोसे गये सारे पदार्थ लेकर चली गयी। उसे लगा कि भाभी का यह काम अपने बड़े भाई के लिए कैसे लज्जा की बात है। उसने युक्ति के साथ भाभी की इस कुबुद्धि को बदलना चाहा।

उसने कनकांगी से कहा–"देखो, कनकांगी, तुम कई दिनों से माँ को भोजन खिलाती हो, पर तुमने कभी नहीं देखा कि माँ किस रूप में आकर खाना खाती है। कल भोजन परोसने के बाद तुम दरार में से ख़ुद देख लो तो सही!"

"अगर मैं देख लूँ तो शायद सासजी लजा जायेंगी।" कनकांगी ने कहा।

"तुम देख रही हो तो माँ को कैसे पता चलेगा?" पति ने कनकांगी से पूछा।

कनकांगी को संतोष हुआ। दूसरे दिन उसने सास की मूर्ति के सामने पत्तल बिछा कर खाना परोसा, हाथ धोकर लौट आयी और दरार में से अन्दर देखा। उसे शारदा दिखाई दी। कनकांगी को आश्चर्य हुआ। प्रति दिन सास अपनी बड़ी बहू के रूप में आकर खाना खाती है। इस तरह वह अपनी दोनों बहुओं के प्रति न्याय करती है। उसे यह उचित ही मालूम हुआ कि मृत्यु को प्राप्त उसकी सास घर की बड़ी बहू के रूप में आती है।

कनकांगी ने शारदा के पास जाकर कहा—"बहन, तुम कैसी भाग्यशालिनी हो? सास रोज़ तुम्हारे रूप में आकर खाना खाती हैं। आज से मैं तुमको सास ही मानकर चलूँगी।"

शारदा का चेहरा पीला पड़ गया। उसने सोचा कि असली बात कनकांगी पर प्रकट हो गयी है और वह उसके साथ परिहास कर रही है। उस दिन से शारदा ने मूर्तिवाले कमरे में जाना बंद किया।

दो-तीन दिन बीत गये। एक दिन कनकांगी ने अपने पति से कहा—"सासजी को शायद यह मालूम हो गया है कि मैंने उनके खाना खाते झांककर देख लिया है। इसलिए उन्होंने खाना खाने से बंद किया है।"

पति ने कनकांगी को असली बात बताकर उसे सांत्वना दी। कनकांगी ने धीरे समझ लिया कि शारदा उसे मुंह दिखाने से शर्मिंदा हो रही है, तब उसे मालूम हुआ कि उसके पति ने जो कुछ कहा, वह सच है।

पुरस्कार

प्राचीनकाल में विदर्भ देश पर शक्तिसेन राज्य करता था। कलिंग देश का राजा शूरसेन विदर्भ को हड़पना चाहता था। उसने विदर्भ के रहस्यों का पता लगाने के लिए कई गुप्तचरों को नियुक्त किया।

यह बात शक्तिसेन को मालूम हो गयी। शूरसेन के कुछ गुप्तचर पकड़े भी गये। शेष गुप्तचरों को डराने के ख्याल से शक्तिसेन ने बन्दी गुप्तचरों को कठोर दण्ड दिया।

मगर शक्तिसेन के दरबार में शूरसेन के गुप्तचर घुस गये थे। अंतःपुर के रहस्य भी शूरसेन के पास पहुँच जाते थे। यह बात शक्तिसेन ने जान ली। उसे निश्चित रूप से पता चला कि उसके अंतरंगी सेवकों में से ही कुछ लोग शूरसेन के गुप्तचर बने हुए हैं।

उन द्रोहियों को पकड़ने का शक्तिसेन ने निश्चय किया। पर यह जानना बड़ा कठिन था कि उसके सेवकों में से कौन विश्वास-पात्र हैं और कौन विश्वासघाती हैं? सब कोई विश्वास-पात्र राजभक्त दिखाई देते थे। एक पर भी संदेह करने की गुंजाइश न थी।

उनके असली रूप का पता लगाने शक्तिसेन ने बुद्धिमति को नियुक्त किया। बुद्धिमति बड़ा अक़्लमंद था और राजा के सलाहकारों में से मुख्य था। अलावा इसके उसने इसके पहले कुछ गुप्तचरों का पता लगाने में सहायता दी थी। सबसे पहले उसी ने यह जान लिया था कि अंतःपुर में भी शत्रु राजा के गुप्तचर पहुँच गये हैं।

बुद्धिमति ने दरबारी गुप्तचरों में से शत्रु राजा के गुप्तचरों का पता लगाने के

जयरामदास

संबन्ध में खूब सोचा और विचारा। अंत में वह एक निर्णय पर पहुँचा।

दूसरे दिन रात को बुद्धिमति ने दरबार के पच्चीस प्रधान व्यक्तियों को अपने घर दावत पर बुलाया। दावत में सब लोग आये। दावत समाप्त हो गयी। तब बुद्धिमति ने एक एक को बुलाकर गुप्त रूप से यों बताया–"यह दावत मेरी विदाई की है। राजा को न मालूम कैसे पता लगा कि मैं शत्रु राजा का गुप्तचर हूँ। राजा को यह भी मालूम हो गया है कि आज दावत में आये हुए लोगों में से कौन कौन गुप्तचर हैं। कल सुबह उन सब गुप्तचरों को फांसी पर लटकवाने का राजा ने पहले ही इंतज़ाम कर रखा है। राजा को मुझ पर जो संदेह है, वह प्रमाणित होने पर कल वे मुझे भी फाँसी के तख़्ते पर लटकवा देंगे। इसलिए मैं सवेरा होने के पहले इस देश की सीमा पारकर चला जा रहा हूँ। इस बात को तुम लोग गुप्त रखो, जान बची रही तो हम लोगों की फिर मुलाक़ात होगी। अच्छा, अब विदा!"

इस प्रकार बुद्धिमति ने सबसे यही बात कहकर उन्हें विदा किया। पर जो सच्चे राजभक्त थे, उन लोगों ने सीधे

अंत:पुर में जाकर राजा से बुद्धिमति का यह रहस्य बता दिया ।

"मैं उस दुष्ट की चाल पहले से ही जानता हूँ । उसको सीमा पार करके जाने से रोकने के लिए मैंने पहले से ही गुप्तचरों को नियुक्त कर रखा है । तुम निश्चित होकर घर जाओ ।" इस प्रकार उन्हें हिम्मत बंधवाकर राजा ने भेज दिया ।

बड़े सवेरे बुद्धिमति अपने घर से निकल पड़ा । एक तेज़ चलनेवाले घोड़े पर सीमा की ओर गया । सीमा के निकट पहुँचते ही पेड़ों की आड़ में से दो घुड़सवार बुद्धिमति के पास आ पहुँचे ।

वे दोनों राजा के दरबार में रहनेवाले थे । इसलिए बुद्धिमति ने उन्हें पहचान कर कहा—"तुम लोग भी निकल पड़े? बडा अच्छा किया ।"

"जी हाँ, हम भी आपके साथ चलेंगे । कल रात को हम आपके घर से जो आये, हमें नींद तक न आयी । राजा को जब हम पर संदेह हो गया है, तब दरबार में टिके रहना बेवकूफ़ी होगी । आप तो बड़े ही होशियार हैं । इसलिए पहले ही सावधान हो गये हैं ।" दोनों घुड़सवारों ने बताया ।

"अच्छी बात है, चलिये । पास में एक उजड़ा हुआ मंदिर है । वहाँ पर थोड़ी देर आराम करेंगे । मेरा घोड़ा थक गया है ।" बुद्धिमति ने कहा ।

तीनों मंदिर के पास पहुंचकर घोड़ों से उतर गये और भीतर चले गये । दूसरे ही क्षण शक्तिसेन के सिपाहियों ने उन्हें घेर लिया । बुद्धिमति के साथ दोनों राजद्रोही राजा के पास ले जाये गये । राजा के सामने दोनों ने अपने अपराध को स्वीकार कर लिया । राजा ने भरी सभा में बुद्धिमति की युक्ति की बड़ी प्रशंसा की और उसे बढ़िया पुरस्कार दिया ।

अमर वाणी

सन्तप्तायसि संस्थितस्य पयसो नामापि न श्रूयते
मुक्ताकारतया तदेव नलिनीपत्रस्थितं दृश्यते
अंतस्सागर शुक्तिमध्य पतितं तन्मौक्तिकं जायते
प्रायेणाधम मध्य, मोत्तमजुषा मेवंविधा वृत्तयः ॥ १ ॥

[जलनेवाले लोहे पर गिरा पानी नाम-रूप को खो देता है; वही पानी कमल पत्र पर मोती जैसा चमकता है । पर वही पानी समुद्र में सीपी में गिरने पर मोती बन जाता है । इसी प्रकार निम्न, मध्य तथा उत्तम स्थानों को प्राप्त करनेवालों की दशा होती है ।]

यः प्रीणयेत् सुचरितैः पितरं स पुत्रः
यद्भर्तुरेव हित मिच्छति तत् कलत्रं,
तन्मित्र मापदि सुखेच समक्रियं यत्
ए तत् त्रयं जगति पुण्यकृतो लभंते ॥ २ ॥

[सदाचार द्वारा अपने पिता को प्रसन्न करनेवाला ही सच्चा पुत्र है, पति की भलाई चाहनेवाली ही सच्ची पत्नी है, विपत्ति तथा संपत्ति के समय समान व्यवहार करनेवाला ही सच्चा मित्र है, ये तीनों पुण्यात्माओं को ही प्राप्त होते हैं ।]

दुर्भिक्षे चान्नदातारां, सुभिक्षे च हिरण्यदं,
चतुरोहंनमस्वामि, रणे धीरं, ऋणे शुचि ॥ ३ ॥

[अकाल के समय अन्नदान करनेवाले को, सुकाल के समय स्वर्णदान करनेवाले को, युद्ध में वीरता दिखानेवाले को तथा जो ऋणग्रस्त नहीं है, उसको भी मैं प्रणाम करता हूं ।]

शिलारथ

[२]

[राजकुमारी पद्मावती ने एक शिलारथ की प्रतिकृति को खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को दिखाकर कहा कि वे लोग विन्ध्याचल में स्थित असली शिलारथ को हिला दें। उस रात को तीन नक़ाबधारी व्यक्तियों ने उन वीरों को मारना चाहा। उन में से एक व्यक्ति के पैर को खड्गवर्मा ने काट डाला। उस वक्त राजभट वहाँ दौड़े आ पहुँचे। बाद—]

चहार दीवारी के पार जो कोलाहल हुआ, उसे सुनते ही जीवदत्त अतिथि गृह से घटना-स्थल पर पहुँचा। खड्गवर्मा उस दृश्य को देख रहा था। राजभट पैर कटे उस नक़ाबवाले से प्रश्न कर रहे थे, पर वह पीड़ा के मारे कराह रहा था।

खड्गवर्मा ने संक्षेप में सारी बातें जीवदत्त को सुनायीं। जीवदत्त ने सोचा—एक नक़ाबधारी का शव अतिथि गृह में है। एक भाग गया है, तीसरा व्यक्ति पैर कट जाने के कारण राज-पथ पर पड़ा हुआ है। उन नक़ाबधारियों को उन्हें मारने के लिए भेजनेवाला शत्रु कौन होगा? आख़िर इसका कोई कारण भी तो हो?

जीवदत्त तुरंत इस निर्णय पर पहुँचा कि उसे क्या करना होगा! वह चहार दीवारी पर चढ़कर राजभटों से बोला—

की ओर सरका दिया और वह नीचे कूद पड़ा।

उस लंगड़े के चेहरे पर से नक़ाब हट गया था। एक काला वस्त्र उसके कंधों पर से लटक रहा था। जीवदत्त ने उस वस्त्र को फाड़ कर लंगड़े के पैर में पट्टी बाँध दी। इसके बाद जीवदत्त खड्गवर्मा की सहायता से उस घायल व्यक्ति को अतिथि गृह में ले गया और उसे ज़मीन पर लिटा दिया।

"तुम कौन हो? हमको मारने के लिए तुम्हें तथा तुम्हारे अनुचरों को भेजनेवाले लोग कौन हैं?" जीवदत्त ने उससे पूछा।

लंगड़े ने इस तरह संकेत किया, मानों वह प्यासी है। खड्गवर्मा ने एक लोटे में पानी लाकर उसके मुँह से लगाया। प्यास के बुझने पर वह पीड़ा से कराहते हुये थोड़ी देर मौन रहा, तब आँखें खोल चारों ओर एक बार निगाह दौड़ायी। उसे एक कोने में अपने एक साथी का शव दिखाई दिया। उसे देखते ही वह फिर कराह उठा। उसके चेहरे पर भय छा गया।

जीवदत्त ने उससे पूछा—"तुम कौन हो? किस दुष्ट ने तुम को भेजा? सच्ची

"तुम लोग हो हल्ला मचाओगे तो, कई लोग यहाँ पर इकट्ठे हो जायेंगे। यह नक़ाबवाला राजगृह में पहुँचना चाहता था, इसे उचित दण्ड मिला, इसलिए इनके साथ जो कुछ निर्णय करना होगा, वह राजा करेंगे। इसलिए इस आदमी को दीवार पर से भीतर डाल दो।"

जीवदत्त राजमहल में ठहरा था। इसलिए राजभटों ने सोचा कि वह कोई राज पुरुष होगा। यह सोचकर भटों ने नक़ाबवाले व्यक्ति को दीवार पर चढ़ाकर जीवदत्त के हाथ सौंप दिया। जीवदत्त ने उस व्यक्ति को दीवार पर से खड्गवर्मा

CHITRA

बात बताओगे तो राजवैद्य को बुलवाकर तुम्हारी जान बचाने का प्रयत्न करूँगा! वरना तुम यहीं पर तड़प-तड़प कर मर जाओगे।"

लंगड़े ने प्रयत्नपूर्वक आँखें मूँद ली। दो-तीन क्षण मौन रहने के बाद आँखें खोल जीवदत्त तथा खड्गवर्मा की ओर ध्यान से देखा, तब कहा–"तुम लोग भी क्षत्रिय हो और मैं भी क्षत्रिय हूँ। पहले मेरा इलाज़ करना तुम लोगों का कर्तव्य है।"

इस पर खड्गवर्मा को बड़ा क्रोध आया, फिर भी वह अपने क्रोध को दबाने का प्रयत्न करते बोला–"नीच कहीं

का! तुम भले ही क्षत्रिय क्यों न हो, पर तुम में क्षत्रियत्व नाम मात्र के लिए भी नहीं है। लुके-छिपे सोनेवालों पर हमला करने का प्रयत्न करनेवाले तुम कैसे क्षत्रिय हो सकते हो? तुम्हें अपने को क्षत्रिय कहते लज्जा नहीं आती?"

जीवदत्त ने खड्गवर्मा को शांत किया। इसके बाद बाहर जाकर एक पहरेदार को आदेश दिया कि वह एक वैद्य को जल्दी बुला लावे।

इस बीच जीवदत्त ने लंगड़े से फिर पूछा कि वह सच सच बता दे। लंगड़ा थोड़ी देर तक संकोच करता रहा, तब बोला–"महाशय, मेरे प्राण तुम्हारे हाथों में हैं। इसलिए मुझे सत्य बताना ही पड़ेगा। मैं महेन्द्रनगर के राजा का द्वितीय पुत्र हूँ। यह जो मरा है, मंत्री का तीसरा पुत्र है। जो भाग गया है, वह सेनापति का ज्येष्ट पुत्र है।"

"ओह, ऐसी बात है! तब तो तुम लोगों की कहानी बड़ी रोचक होगी। लेकिन तुम तीनों महावीर इस पद्मपुर में नक़ाब धारण कर के रात के समय सेंध क्यों लगाने आये हो? तुम्हारा क्या नाम है?" जीवदत्त ने पूछा।

"मेरा नाम प्रतापचन्द्र है। इस नगर में रात्रि के समय ऐसे साहस पूर्ण कार्य में प्रवृत्त होने का कारण प्रेम ही है।" लंगड़े ने उत्तर दिया।

"प्रतापचन्द्र! तुम्हारे नाम में प्रताप भले ही दिखाई देता हो, पर तुम में ज़रा भी प्रताप नहीं है। तुम्हारा व्यवहार तथा तुम जो कार्य करना चाहते थे, ये सब कायर तथा दुष्टों के काम हैं। तुमने प्रेम कहा, वह कैसा प्रेम था?" जीवदत्त ने पूछा।

प्रतापचन्द्र ने पीड़ा के मारे कराते हुये कहा–"मैं ने राजकुमारी पद्मावती के साथ प्यार किया है। उसने यह प्रतिज्ञा की है कि वह एक महान बीर के साथ ही विवाह करेगी। इसलिए मैं अपने साथियों के साथ इस नगर में प्रवेश करके राजकुमारी का अपहरण करना चाहता था। मगर मेरे इस प्रयत्न में तुम दोनों रोड़े बने हुए थे। इसलिए पहले मैंने तुम दोनों का अंत करना चाहा। मगर हम असफल रह गये।"

खड्गवर्मा तथा जीवदत्त की समझ में यह न आया कि प्रतापचन्द्र को राजकुमारी का अपहरण करने में वे दोनों कैसे रोड़े बने हुए हैं। जीवन और मृत्यु के बीच झूलनेवाले प्रतापचन्द्र की बातें उन्हें समुचित मालूम नहीं हुईं। इसी बीच पहरेदार एक युवा वैद्य को ले वहाँ पर आ पहुँचा।

वह युवा वैद्य राजवैद्य के पास वैद्य-विद्या का अभ्यास कर रहा था। उसे आज तक किसी का ख़ुद इलाज करने का मौक़ा न मिला था। इसलिए पीड़ा से कराहनेवाले प्रतापचन्द्र को देखते ही बहुत ही प्रसन्न हो अपनी थैली से दवाइयाँ निकालते हुए बोला–"ओह, इनका पैर कट गया है। यह तो दायाँ पैर कट

अतिथिगृह में आये और पहरेदार के द्वारा खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को खबर कर दी। बाहर राजा तथा मंत्री को देख वे दोनों आश्चर्य चकित हो गये।

मंत्री ने उनके आश्चर्य को भांप लिया और धीमी आवाज में कहा–"तुम लोगों को इस बात का आश्चर्य हुआ होगा कि इस दुर्घटना का समाचार हमें कैसे मिला? हमारे गुप्तचर और पहरेदार बहुत ही सजग होते हैं। खैर! यह तो बताओ कि क्या यह प्रतापचन्द्र जीवित रहेगा? इसका तुम क्या करना चाहते हो?"

राजा पद्मसेन उन दोनों वीरों की ओर तीव्रदृष्टि डाले हुए था। उसे इस बात की शंका थी कि इस प्रतापचन्द्र के कारण महेन्द्र नगर के राजा के साथ उसे युद्ध करना पड़ेगा! उसे यह भी लगा कि इस अनहोने युद्ध का कारण खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ही हैं।

जीवदत्त ने राजा के मौन का कारण समझ लिया। उसने महाराजा से सारी बातें निवेदन करते हुए कहा–"राजन, हमें केवल अपनी आत्मरक्षा के लिए यह कार्य करना पड़ा। अलावा इसके उस

गया है। बायाँ पैर होता तो इसे सीकर पट्टियाँ बाँध देता।"

"पैर के कटे बड़ी देर हो गयी है। इसे बचाने की कोशिश करो। राजा बहुत ही प्रसन्न होंगे।" जीवदत्त ने समझाया।

"मेरे हाथों में आज तक कोई नहीं मरा और न आज तक मैंने किसी का स्वयं इलाज ही किया है।" ये शब्द कहते युवा वैद्य ने प्रतापचन्द्र के पैर की पट्टी खोल दी। घाव पर दवाइयाँ डालकर फिर पट्टी बाँध दी।

युवा वैद्य के चले जाने पर पंद्रह मिनट बाद राजा पद्मसेन तथा मंत्री सोमदेव

वक़्त हमें यह मालूम न था कि इन नक़ाबवाले व्यक्तियों का नेता महेन्द्रनगर का राजकुमार है।"

"जो होना था, सो हो गया। अब तुम्हीं लोग बताओ, हमें क्या करना होगा?" राजा ने पूछा। यह सवाल राजा ने मंत्री तथा उन दोनों वीरों को लक्ष्य करके पूछा था।

जीवदत्त थोड़ी देर तक यह सोचकर मौन रहा कि देखें, मंत्री क्या जवाब देता है। पर सोमदेव थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब जीवदत्त से बोला—"मान लो कि इस दुर्घटना का समाचार मुझे तथा महाराजा को पता नहीं है, ऐसी हालत में तुम लोग क्या करते?"

जीवदत्त ने खड्गवर्मा की ओर देखा। खड्गवर्मा इस प्रकार सर हिलाकर मौन रहा कि इसका जवाब तुम्हीं दो। इस पर जीवदत्त ने कहा—"मैं सोचता हूँ कि महाराजा तथा महामंत्री हमारे इस व्यवहार में कोई जल्दबाज़ी न पायेंगे। यदि प्रतापचन्द्र के संबंध में हमें ही निर्णय करना होता तो हम लोग प्रात:काल होने के पहले इसको राजधानी से ले जाकर जंगल के किसी पेड़ के नीचे लिटा देते और

शिलारथ की खोज में विन्ध्य पर्वतों की ओर चल पड़ते।"

"ऐसी हालत में जंगल में कोई ख़ूँख़्वार जानवर इसको खा डालेगा, पर भाग जानेवाले सेनापति के पुत्र का क्या होगा? वह सारी बातें महेन्द्रनगर के राजा से बता देगा न?" राजा पद्मसेन ने पूछा।

"इस कारण से महाराजा को कोई विपत्ति न होगी। वह कुछ शिकायत करेगा भी तो हम दोनों के बारे में ही बता देगा। महेन्द्रनगर का राजा हम से बदला लेने का प्रयत्न करेगा। आप पर वह कभी नाराज़ न होगा। मंत्री

के पुत्र के शव को तथा प्रतापचन्द्र को नगर के बाहर ले जाने के लिए एक गाड़ी तथा एक अनुमति-पत्र हमें दिला दीजिये। बस, बाक़ी सारे काम हम जंगल में पूरा करेंगे।" जीवदत्त ने कहा।

राजा पद्मसेन तथा मंत्री सोमदेव एकांत में जाकर परामर्श करने के बाद पुनः उन वीरों के पास लौट आये। उन्हें जीवदत्त का उपाय बड़ा ही उचित मालूम हुआ।

"अच्छी बात है। तुम्हारे कहे अनुसार तेज चलनेवाली एक गाड़ी दिलवा देंगे। शव तथा प्रतापचन्द्र को उस गाड़ी में लदवाकर सूर्योदय के पहले हमारे नगर को पार कर जंगल में पहुँच जाओ। इसके बाद तुम लोग जो कुछ करना चाहते हो, करो।" राजा ने कहा।

राजा का आदेश पाकर एक पहरेदार दो बैलों से जुती एक गाड़ी ले आया। उसके दोनों तरफ़ पर्दे लगे थे। नगर के द्वारपालों के नाम गाड़ी को बाहर भेजने का अनुमति-पत्र लिखकर उस पर मंत्री सोमदेव ने अपनी मुहर लगा दी।

खड्गवर्मा तथा जीवदत्त महेन्द्रनगर के मंत्री के पुत्र के शव को तथा बेहोश पड़े प्रतापचन्द्र को गाड़ी में लादकर नगर के द्वार तक पहुँचे। द्वारपाल को मंत्री का अनुमति-पत्र दिखाया। द्वारपालों ने उस पत्र को देखते ही गाड़ी को भेज दिया।

नगर को पारकर खड्गवर्मा तथा जीवदत्त बैलों को हाँकते तेजी के साथ उस झोपड़ी की दिशा में गाड़ी को ले गये जहाँ जंगल में एक वृद्ध मवेशी था। उसी समय प्रतापचन्द्र का मित्र जो प्राणों से बच गया था, यह समाचार अपने राजा को देने घोड़े पर तेज़ी के साथ महेन्द्रनगर की ओर रवाना हुआ। (और है)

हँसनेवाला चोर

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन, तुम यदि किसी मित्र के वास्ते इस तरह श्रम उठा रहे हो तो ध्यान रखो कि किसी भी मित्र पर आँख मूँदकर विश्वास न करो। परिस्थितियों के प्रभाव में आकर जानी दोस्त भी दुश्मन बन जाते हैं। मैं तुमको दोस्ती के कारण तक़लीफ़ों में फँसे तारानाथ की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा :– एक छोटे से गाँव में तारानाथ तथा सोमनाथ नामक दो जानी दोस्त थे। वे दोनों धन कमाने के ख्याल से अपने गाँव को छोड़ दूसरे देश में गये। व्यापार करके दोनों ने खूब धन

वेताल कथाएँ
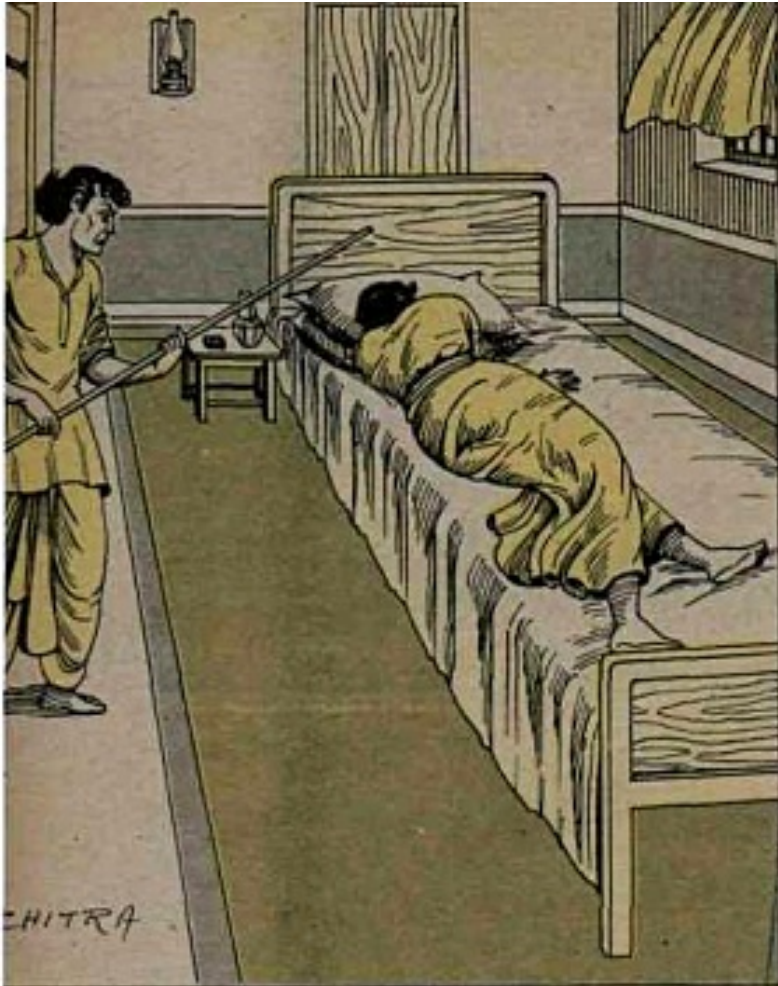
कमाया। उस धन को आपस में बराबर बाँटकर दोनों आराम से अपने दिन काटने लगे।

कुछ साल बीत गये। तारानाथ किफ़ायत के साथ आराम से अपने दिन बिताने लगा, मगर सोमनाथ अपना अधिक समय राजधानी में बिताते हुए शराब पीने और जुआ खेलने में बरबाद करने लगा। धीरे-धीरे उसकी सारी जायदाद खतम हो गयी। आखिर वह राह का भिखारी बना।

एक दिन शाम को सोमनाथ तारानाथ के घर आ पहुँचा। मैले कपड़ों में सोमनाथ को देख तारानाथ को बड़ा दुःख हुआ। सोमनाथ का चेहरा उतरा हुआ था और उसके कपड़े फटे-पुराने थे।

"सोमनाथ, तुम्हारी ऐसी हालत कैसे हो गयी?" तारानाथ ने पूछा। तुरंत उसे पहनने को नये कपड़े दिये, बढ़िया खाना खिलाया और उस रात को आराम से सोने के लिए सुविधा कर दी।

लेकिन सोमनाथ को उस रात को नींद नहीं आयी। अपने मित्र का यह आदर देख वह खुश नहीं हुआ, बल्कि उसकी अच्छी हालत पर उसे ईर्ष्या हुई। उसके साथ बराबर धन बाँटनेवाला यह तारानाथ कैसी ठाठ की ज़िंदगी जीता है? उसे तो खाने और पहनने के लिए खाना-कपड़े मिलना मुश्किल हो गया है! उस शराबी सोमनाथ के मन में ये बातें सोचने पर अपने मित्र के प्रति ईर्ष्या पैदा हो गयी। आधी रात के समय वह अपने बिस्तर से उठा, एक कोने में पड़ी लाठी लेकर सोनेवाले तारानाथ को इस तरह पीटा कि वह बेहोश हो गया। तब तारानाथ को मरा समझ कर सोमनाथ वहाँ से राजधानी की ओर भाग गया।

दूसरे दिन राजा के दरबार में जाकर सोमनाथ ने शिकायत की–"महाराज, मेरे गाँव में तारानाथ नामक मेरे बचपन का एक दोस्त है। मैं व्यापार करने दूसरे देश में गया, धन कमाकर लौटने पर देखता क्या हूँ कि उसने मेरे घर पर क़ब्ज़ा कर लिया है। मैंने अपना घर खाली करने को कहा तो उसने नाराज़ होकर मुझे बुरी तरह से पीटा। इसलिए आप से प्रार्थना है कि मेरे प्रति न्याय कीजिये।"

राजा ने अपने भटों को भेजकर तारानाथ को बुला भेजा। घायल तारानाथ राजा के सामने आ खड़ा हुआ।

"सुनो, तुम जिस घर में रहते हो, वह सोमनाथ का है?" राजा ने तारानाथ से पूछा।

तारानाथ ने सोमनाथ की ओर देख हालत समझ ली और उसने कहा–"जी हाँ, महाराज, वह घर सोमनाथ का है।"

"क्या यह बात सच है कि सोमनाथ ने जब तुमसे उस घर को खाली करने को कहा, तब तुमने उसे पीटा?" राजा ने फिर पूछा।

सोमनाथ की इस झूठी शिकायत पर तारानाथ को आश्चर्य हुआ, फिर भी अपने दोस्त पर रहम खाकर सर झुकाये बोला–"हाँ, महाराज, उसका कहना सच है।"
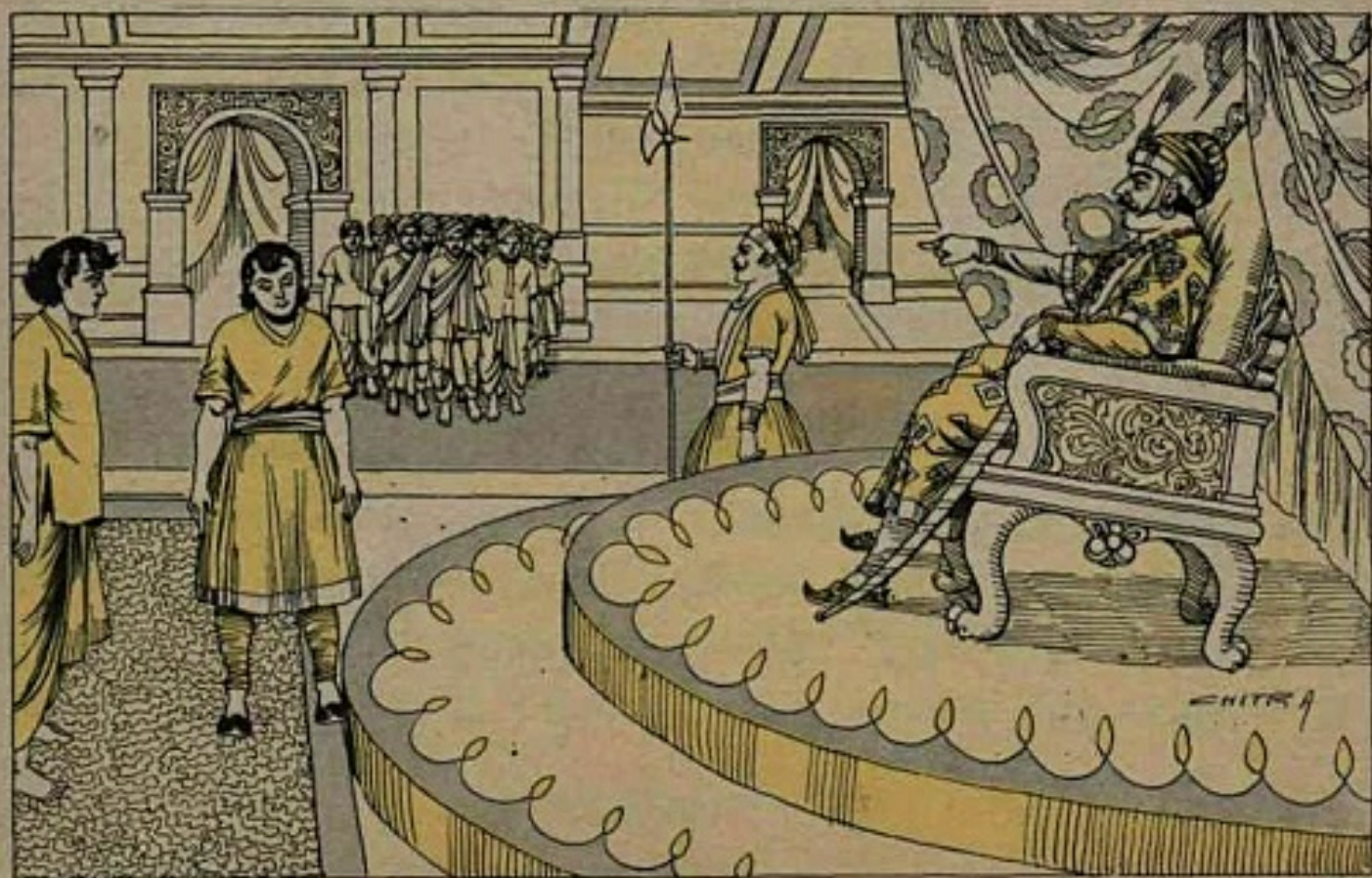
सोमनाथ मित्रता की बात बिलकुल भूल बैठा था, इसलिए उसने सोचा कि तारानाथ का चोट खाने से दिमाग खराब हो गया है, इसलिए वह ऐसा उत्तर दे रहा है! चलो, बड़ा अच्छा हुआ।

राजा ने तारानाथ को दोषी ठहराकर उसे कारागार की सजा दी। राजभट उसे ले गये।

यह फ़ैसला सुनने पर एक चोर जो दरबार में हाज़िर था, ठठाकर हँस पड़ा।

राजा ने उस चोर को निकट बुलाकर पूछा—"तुम हँसते क्यों हो?" चोर ने अपनी हँसी का कारण बताया।

राजा ने तुरंत सोमनाथ के पास एक भट को भेजकर कहलाया कि आज वह राजा का मेहमान बनेगा। सोमनाथ की खुशी का ठिकाना न रहा। वह राजमहल में आ पहुँचा।

सोमनाथ को इस बात का बड़ा आनन्द हुआ कि एक तो राजा ने उसके अनुकूल फ़ैसला किया और उल्टे उसके प्रति यह आदर भी दिखा रहा है।

सोमनाथ को राजमहल में ठहरने का अच्छा प्रबंध किया गया। उसके भोजन तथा शराब आदि का भी उचित इंतज़ाम था। उसने भर पेट बढ़िया भोजन किया। शराब पीकर ठण्डी हवा का सेवन करने के ख्याल से खिड़की खोल दी, तो देखता क्या है, सामनेवाले कमरे में हथकड़ी व बेड़ियाँ पहने तारानाथ टहल रहा है।

सोमनाथ ने तारानाथ को पुकार कर पूछा—"तुम्हारी ज़िंदगी अब क़ैद में ही बीत जायगी, इसलिए यह बताओ कि तुमने अपना धन कहाँ छिपाया?"

तारानाथ ने उसकी ओर सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से देखकर कहा—"मैंने अपने घर के पूरबवाले कमरे में सारा धन छिपा रखा है। उसे लेकर तुम आज से अपनी

बुरी आदतों को छोड़ दो और आराम से रहो।"

दूसरे क्षण सोमनाथ के कमरे में दो राजभट प्रवेश करके उसे अपने साथ राजा के पास ले गये।

दूसरे दिन दरबार में सोमनाथ को हाज़िर किया गया, राजा ने उसे ज़िंदगी भर की कारागार की सजा सुना दी। तारानाथ की सजा भी क़ायम रह गयी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, चोर क्यों हँस पड़ा? क्या उसने गुप्त रूप से राजा के कानों में कोई रहस्य बताया होगा? जब यह स्पष्ट मालूम हो गया कि सोमनाथ दोषी है और तारानाथ निर्दोष है, तब राजा का सोमनाथ को दण्ड देना उचित है, मगर तारानाथ को कारागार से मुक्त क्यों नहीं किया? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"चोर इसलिए हँस पड़ा था कि उसने देखा, तारानाथ ही चोट खाया हुआ है, फिर भी राजा ने उसकी बातों पर विश्वास करके फ़ैसला सुनाया। चोर ने राजा से कहा होगा कि तारानाथ का जवाब विश्वास करने योग्य नहीं है। इसीलिए असली बात को जानने के लिए राजा ने सोमनाथ को अपना मेहमान बनाया। सोमनाथ के साथ तारानाथ को भी राजा ने इसलिए दण्ड दिया कि दोनों ने अन्याय के पक्ष में समान रूप से काम किया है। सोमनाथ के अपराध को छिपाने के लिए तारानाथ ने अंत तक मदद पहुँचायी। इसलिए वह भी दण्ड पाने योग्य है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

राजयोग

बहुत दिन पहले की बात है। एक गाँव में आनंद नामक एक युवक था। जब वह विवाह के योग्य हुआ, तब उसके माता-पिता ने एक अच्छा संबंध देखा। युवती का नाम लावण्या था। वह बड़ी सुंदर थी। आनंद ज्योतिष पर विश्वास रखता था। इसलिए उसने अपने परिचित एक ज्योतिषी के पास जाकर पूछा कि उस युवती के साथ शादी करने से उसका भविष्य चमकेगा कि नहीं।

ज्योतिषी ने आनन्द के मुँह से लावण्या का समाचार जानकर कहा—"आनंद, यदि तुम उस युवती के साथ विवाह करोगे तो तुम्हें उसके चप्पल ढ़ोने पड़ेंगे और उसे 'माँ' कहकर पुकारना पड़ेगा। मगर जब वधू तुम्हारे घर आयेगी, तब तुम्हें एक साल तक उससे किसी भी हालत में बात न करनी होगी। यदि ऐसा करोगे तो उसके द्वारा तुमको राजयोग प्राप्त होगा। इसलिए तुम उपर्युक्त बातों के लिए तैयार हो तो उसके साथ विवाह करो, वरना एक दूसरा संबंध क़ायम कर लो।"

आनंद ने ज्योतिषी की बातों पर खूब विचार किया और अंत में लावण्या के साथ विवाह करने का निश्चय किया। उन दोनों का विवाह संपन्न हुआ। पत्नी के घर आने पर भी आनंद उसकी ओर न देखता था और न उससे बात करता था।

लावण्या को अपने पति का यह व्यवहार बिलकुल समझ में न आया। वह यह न समझ पायी कि किस कारण से उसका पति उसे पसंद नहीं करता है और उस पर नाराज़ हो, तो क्यों? अपने पति को खुश करने के लिए लावण्या ने सब प्रकार के प्रयत्न किये, स्वादिष्ट पदार्थ बनाकर खिलाये, कभी कभी ठीक उसके सामने

सुरेश द्विवेदी

जाकर खड़ी भी हो जाती थी। फिर भी आनंद उससे बोलता न था। उससे बोलवाने के लिए लावण्या ऐसे भी काम करती जो उसके पति को पसंद न थे। तरकारी में नमक न डालती, नहाने के लिए हद से ज्यादा खौलनेवाला गरम पानी रखती, पर यह सब आनंद सहन करता, मगर लावण्या से न बोलता।

लावण्या के ये सब प्रयत्न देख आनंद को उस पर दया आती। उसे इस बात का डर भी लगा कि साल भर पूरा होने के पहले वह अपने ऊपर से नियंत्रण भी खो बैठेगा। इसलिए वह एक दिन अपनी पत्नी से कहे बगैर घर से भाग खड़ा हुआ। इसके बाद उसका पता न चला।

इसी समय उस देश में पानी की तंगी आयी। नगर में जो तालाब था, उसे एक नाले के ज़रिये पानी मिलता था, पर उस साल वह नाला सूख गया। पहाड़ से वह नाला नीचे बहता था, मगर नाले में एक पहाड़ी चट्टान अटक गयी थी, जिससे उसे हटाना ज़रूरी था। कई लोगों ने आकर उस चट्टान को हटाने की कोशिश की, पर कोई भी उस चट्टान को हटा न पाया।

एक सिद्धयोगी ने बताया कि जो युवती अपने पति के साथ गृहस्थी चलाते हुए भी ब्रह्मचारिणी बनी रहेगी, उसके ढकेलने पर वह चट्टान नीचे गिर जायगी। लावण्या के कानों में जब यह समाचार पड़ा, तब उसका मन उत्साह से भर उठा। उसने राजा के पास पहुँच कर कहा–"महाराज, साल भर पहले मैं अपने पति के घर आयी, लेकिन आज तक मेरे पति मुझसे बोले नहीं, इसलिए मैं प्रयत्न करके देखूंगी कि पानी की धारा को रोकनेवाली उस चट्टान को मैं हटा सकती हूँ कि नहीं।"

राजा ने लावण्या को देख आश्चर्यचकित हो कहा–"बहन, यदि तुम पानी के इस अकाल को दूर करोगी तो निश्चय ही मैं तुमको आधा राज्य दे दूँगा। प्रयत्न करके देखो, अगर तुम्हारा प्रयत्न सफल हुआ तो प्रजा सुखी रहेगी।"

इसके बाद राजभट लावण्या को पहाड़ पर ले गये। उसके हाथ के लगते ही पहाड़ी चट्टान हिल गयी और नीचे की ओर लुढ़क पड़ी। उसके साथ पानी की धारा निकल पड़ी और पहाड़ के नीचे के तालाब पानी से भर गये।

राजा ने अपना आधा राज्य लावण्या को देकर उसकी रानी के रूप में लावण्या का पट्टाभिषेक किया। लावण्या अपने राज्य पर शासन करने लगी।

इस घटना के कुछ दिन बाद आनंद फटे कपड़ों से भिखारी के रूप में उस नगर में आ पहुँचा! वह राजपथ पर पैदल चला जा रहा था। इसी समय रानी का रथ उस पथ पर आ पहुँचा। रथ पर से रानी का चप्पल नीचे गिर पड़ा। तुरंत आनंद उसे अपने हाथ में ले रथ के पीछे दौड़ा और उस चप्पल को रानी के चरणों के पास रखते बोला–"माँ, आपका चप्पल नीचे गिर गया था, ले लीजिये।"

आनंद ने लावण्या को नहीं पहचाना, पर लावण्या ने अपने पति को पहचाना। अपने पति के इस संबोधन पर उसे आश्चर्य एवं आनंद भी हुआ। रथ पर उसे भी बिठलाकर वह राजमहल में गयी।

आनंद की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। उसने अपने व्रत का पालन किया था, इसीलिए लावण्या रानी बन सकी। तब आनंद ने सारी बातें उसे सुनाकर उसकी शंकाओं को दूर किया। दूसरे ही दिन आनंद को राजा बनाया गया। उसने बहुत समय तक सुखपूर्वक राज्य किया।

भाई-भाई

एक गाँव में परंधाम नामक एक किसान था। उसके दो बेटे थे। दोनों रत्नों के समान थे। उनके नाम थे राम और लक्ष्मण। दोनों भाई सचमुच राम-लक्ष्मण ही थे। एक दूसरे पर अपार प्रेम था। बड़े होने पर दोनों ने शादियाँ कीं। उनकी पत्नियाँ भी घर आयीं।

कुछ साल बाद राम-लक्ष्मण के माता-पिता की मृत्यु हो गयी। फिर भी वे मिल-जुलकर रहते और खेती का काम देख लेते थे। समय बीतता गया। पर राम के कोई संतान न हुई, पर छोटा भाई लक्ष्मण के देखते-देखते पाँच बच्चे हो गये। इस अंतर के साथ दोनों बहुओं के बीच मन मुटाव शुरू हुआ। धीरे-धीरे घर के काम के बंटवारे को लेकर उन में झगड़ा भी होने लगा।

इन झगड़ों से छुट्टी पाने के लिए दोनों भाई खेत और घर बांटकर अलग-अलग रहने लगे। मगर उन दोनों के बीच पहले का वह प्रेम बना ही रहा।

एक साल बड़ी अच्छी फ़सल हुई। दोनों भाइयों ने फ़सल की कटाई करवा कर अनाज के ढेर लगवाये। अब अनाज को केवल घर पहुँचा देना बाक़ी रह गया था।

उस रात को राम और लक्ष्मण अपने अपने खेतों में पहरा दे रहे थे। खाने का वक़्त हो गया। राम ने अपने छोटे भाई लक्ष्मण को बुलाकर कहा–"भैया, मैं घर जाकर खाना खाकर लौटता हूँ। तब तक तुम मेरे अनाज की भी देखभाल किया करो। मेरे लौटने पर तुम खाने के लिए जा सकते हो।"

लक्ष्मण ने मान लिया और अपने बड़े भाई को घर भेज दिया। लक्ष्मण अकेले

जनार्दन राय

बैठा था। उसके दिमाग में यह ख्याल आया–उसके तो तीन बेटे और दो बेटियाँ हैं। बड़ा बेटा दो-तीन साल के अन्दर बालिग हो जायगा। उस वक़्त उसका काम बड़ा आसान हो जायगा। पर बेचारे बड़े भाई के कोई संतान नहीं है। उसकी उम्र भी बढ़ती जा रही है। बुढ़ापे में यदि उसे आराम से रहना है तो थोड़ा-बहुत बचा लेना जरूरी है। मैं उसकी मदद करना चाहूँ तो वह मानेगा नहीं। अगर वह मान भी ले तो भी भाभी न मानेगी। यह सोचकर लक्ष्मण ने एक बड़ा झाबा लिया। अपने अनाज के ढेर में से दस झाबे भरकर बड़े भाई के अनाज के ढेर में डाल दिया। तब चुपचाप लौट आया और अपनी चारपाई पर आ बैठा।

इतने में राम भोजन करके लौट आया और लक्ष्मण को खाने के लिए घर भेज दिया। लक्ष्मण के जाते ही राम के मन में यह विचार आया। इस साल तो बड़ी अच्छी फ़सल हुई, पर लक्ष्मण को क्या बचेगा? उसका तो बहुत बड़ा परिवार है। बच्चों की पढ़ाई, कपड़े-लत्ते का खर्च सामने पड़ा है। उसकी अपनी बात तो अलग है। केवल वह और उसकी पत्नी दो जने हैं। थोड़े में ही संभाल सकते हैं। इस साल लक्ष्मण की मदद करने का अच्छा मौक़ा मिला है। यदि वह अनाज देगा तो वह न लेगा। अगर वह लेगा, तो भी उसकी पत्नी न मानेगी, इसलिए राम ने इधर उधर देखा, किसी को वहाँ पर उपस्थित न देख उसी झाबे से अपने ढेर में से दस झाबे भरकर लक्ष्मण के अनाज के ढेर में डाल दिया और चुपचाप आकर अपनी चारपाई पर इस तरह बैठ गया मानों वह कुछ न जानता हो!
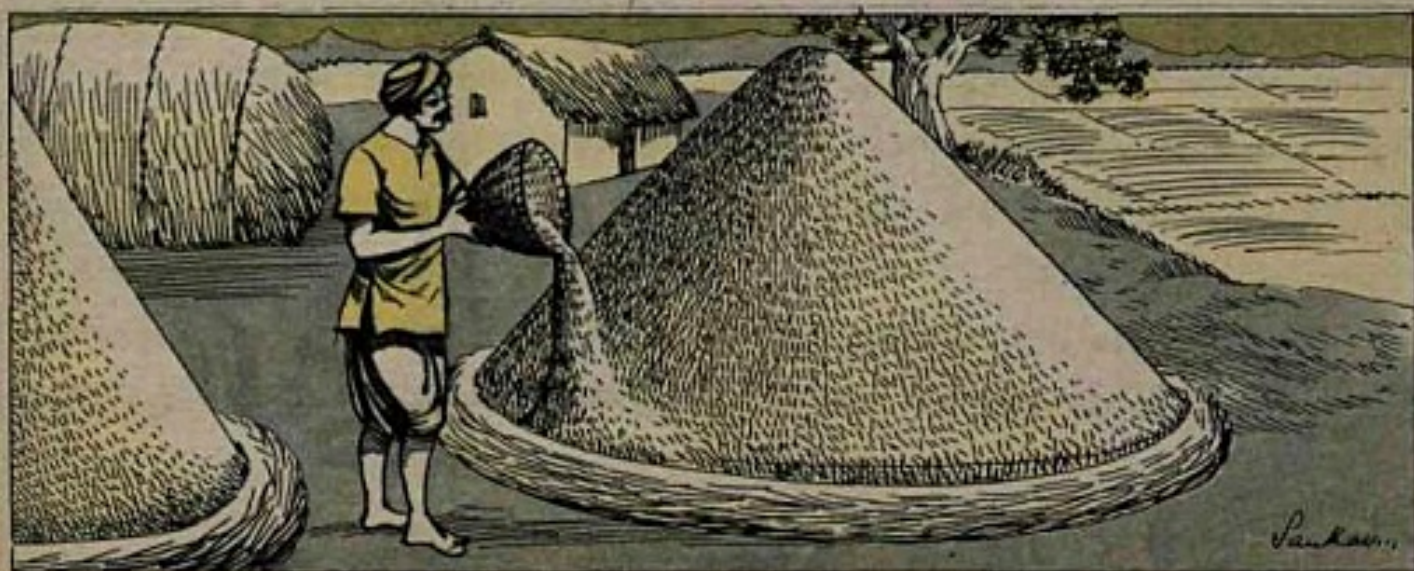
एक गाँव में एक लालची तथा दुष्ट ज़मीन्दार था। उसने एक वर्ष चालीस एकड़ का आम का बगीचा लगाया। उसने पौधों को पानी देने तथा बगीचे का पहरा देने के लिए एक माली को रखना चाहा। एक दिन जमुनादास नामक एक गरीब को बुलाकर कहा—"देखो, इन पौधों में रोज़ पानी देते जाओ, इनमें फल लगने पर मैं तुमको चार एकड़ दे दूँगा।"

जमुनादास ने मान लिया। उसने उस बगीचे में छोटी-सी झोंपड़ी बनायी, पौधों को पानी सींचते व पहरा देते चार साल बिताये। चौथा साल खतम होने पर जमुनादास ने ज़मीन्दार से कहा—"साहब, बगीचे में फल लगे हैं, जाकर देख लीजिये।"

ज़मीन्दार ने सारा बगीचा घूमकर देखा और कहा—"अभी सभी पौधों में फल नहीं लगे हैं। एक और साल तुम्हीं देख लो।" जमुनादास ने एक और साल बगीचे की देखभाल की और ज़मीन्दार को उसकी शर्त याद दिलायी।

ज़मीन्दार ने चार एकड़ बंजर भूमि को दिखाकर कहा—"मैं यही ज़मीन तुमको देना चाहता था। इसमें तुम खेती करो।"

जमुनादास ने ज़मीन्दार से कहा—"साहब आप ने चार एकड़ आम का बगीचा देने का वादा किया था। इस तरह धोखा देना उचित नहीं।"

ज़मीन्दार ने कहा—"मैंने तुमको चार एकड़ देने की बात बतायी, मगर आम का बगीचा नहीं। अलावा इसके सारे पेड़ों में फल भी तो नहीं लगे हैं।" ये शब्द कहते उसने जमुनादास को दो ऐसे पेड़ दिखाये जिनमें फल न लगे थे।

जमुनादास ज़मीन्दार की धोखेबाजी पर पछताते घर चला गया। जमुनादास का बेटा यह समाचार सुनकर एकदम नाराज़

सुशीला यादव

हो गया और उसने ज़मीन्दार को एक अच्छा सबक़ सिखाने का निश्चय किया।

कुछ दिन बीत गये। उसने एक सन्यासी का वेष बनाया, अपने दो मित्रों को शिष्यों के वेष बनाकर गाँव के बाहर चला गया। एक बरगद के नीचे बैठकर अपने शिष्यों को गाँव में भेज दिया। वे दोनों शिष्य गाँव में घूमते लोगों को अपने गुरु की महिमा बताने लगे। उन्होंने यह भी प्रचार किया कि उनके गुरु ने काशी की यात्रा पर जाते गाँव के बाहर बरगद के नीचे पड़ाव डाल दिया है। कोई चाहे तो उनके दर्शन कर लाभ उठा सकते हैं।

ये बातें सुनकर गाँव के कई लोग फल और दूध लेकर उस सन्यासी के पास गये। उन सबसे जमुनादास का लड़का परिचित था, इसलिए उसने ऐसा अभिनय करके वे सारी बातें बतायीं मानों दिव्य दृष्टि से देखकर बताते हो! अपनी सच्ची हालत को सन्यासी के मुँह से सुनकर उनके प्रति गाँववालों की श्रद्धा बढ़ गयी।

उस दिन शाम को शिष्यों ने गाँव में जाकर लोगों में यह प्रचार किया कि उनका गुरु ज़मीन के भीतर गढ़ी निधियों का पता बता सकते हैं! यह खबर ज़मीन्दार के कानों में भी पड़ी।

उस दिन रात को ज़मीन्दार दूध, फल तथा अन्य उपहार लेकर बरगद के पास गया। सन्यासी के चरणों पर गिर कर बोला—"महात्मन, मुझे कम से कम निधियों का एक स्थान तो दिखाइये। मैं उस धन को पुण्य के कार्यों में लगाऊँगा।"

ज़मीन्दार ने बार-बार बिनती की। इस पर सन्यासी ने विवश होकर मान जाने का अभिनय करते हुए कहा—"तुम मेरे साथ चलो, मैं तुमको एक जगह दिखा दूँगा।" यह कहकर सन्यासी ज़मीन्दार को अपने साथ लेकर उस जगह पहुँचा

जिस बंजर भूमि को ज़मीन्दार ने जमुनादास को दिया था। उस स्थान पर पहुँचते ही सन्यासी ने एक जगह एक वृत्ताकार लकीर खींच दी और कहा—"इस स्थान पर तुम आठ-दस फुट गहराई तक खुदवा दोगे तो तुम्हें अपार सोना प्राप्त होगा।"

इसके बाद सन्यासी ने ज़मीन्दार से कहा—"मैं कल सवेरे काशी की यात्रा पर जा रहा हूँ, मेरे लौटने तक तुमको इस धन से एक शिव मंदिर बनाना होगा।" ये शब्द कहकर सन्यासी अपने शिष्यों के साथ कहीं चला गया।

ज़मीन्दार ने सवेरा होते ही जमुनादास को बुलवाकर कहा—"जमुनादास, मैंने तुमको चार एकड़ की जो बंजर भूमि दी, उसे तुम मुझे लौटा दो। तुम्हारी उम्र भी बढ़ती जा रही है, उसे तुम उपजाऊ नहीं बना सकोगे। जैसे तुम चाहते हो, चार एकड़ आम का बगीचा मैं तुमको दे दूंगा।"

जमुनादास ने सर हिलाकर कहा—"साहब, मुझे वही बंजर रहने दीजियेगा। आप मुझे वे चालीस एकड़ आम का बगीचा भी दे, मुझे नहीं चाहिए।"

ज़मीन्दार ने परेशानी के साथ जमुनादास से सौदा करना चाहा, वह आखिर दस एकड़ आम का बगीचा देने को तैयार हो गया, तब भी जमुनादास मानने को तैयार न हुआ। ज़मीन्दार ने बीस एकड़ देना चाहा, अंत में उन चार एकड़ बंजर भूमि के लिए अपने चालीस एकड़ आम का बगीचा देने का वादा किया। तब जमुनादास ने मान लिया और चालीस एकड़ आम का बगीचा अपने नाम पर लिखवाया। ज़मीन्दार ने सोने का सपना देखते उस बंजर भूमि को खुदवाना शुरू किया। दस फुट गहराई तक ज़मीन खोदी गयी, पर उसे सोने का एक टुकड़ा भी वहाँ पर न मिला।

सुधार

एक जंगल में एक मुनि तपस्या किया करता था। जंगल में लकड़ी काटने जानेवाले लोग उसके पैरों पर फल रखकर चले जाते थे। मुनि कभी आँखें खोलकर देख लेता, सामने कुछ दिखाई देता तो उसे खा लेता, वरना जंगल के जानवर उनको खा जाते। यह क्रम बराबर चलता रहा। कई लोगों ने मुनि को देखा, पर किसी ने उस पर कोई ध्यान न दिया।

एक दिन एक आदमी नारियलों की गठरी लेकर उस रास्ते से गुज़रा। मुनि को देख वह चार नारियल उसके सामने रखकर चला गया। थोड़ी देर बाद मुनि ने आँखें खोलकर देखा। उसे नारियल दिखाई दिये। मुनि उनको फोड़ना ही चाहता था कि तभी एक लकड़हारे ने उसके पास आकर अपनी कुल्हाड़ी से एक नारियल फोड़ा और मुनि के हाथ दिया। मुनि नारियल का पानी पीकर उसकी गरी खाने लगा, तब लकड़हारे ने एक दूसरे नारियल को फोड़ना चाहा। मुनि ने उसको रोकते हुए कहा– "तुम इन तीनों नारियलों को ले जाओ। उनको फोड़ते समय तुम जो इच्छा करोगे, उसकी पूर्ति होगी। मैं तुम्हारे बारे में जानता हूँ।"

लकड़हारा लकड़ी की गठरी के साथ मुनि के दिये तीनों नारियल लेकर अपने घर पहुँचा।

उस लकड़हारे का नाम गंगाराम था। लकड़ी बेचने पर उसे जो कुछ मिलता, उसमें से आधा खाने के लिए खर्च करता. चौथा हिस्सा दान करता, एक चौथाई हिस्सा बचा लेता। उसने यह प्रतिज्ञा की थी, कि चाहे उसके पास जितने भी रुपये जमा हो जाय, वह लकड़ी काटना बंद न

दिनेश

करेगा। जिस दिन उसे कम पैसे मिलते, उस दिन वह यह सोंचकर दुःखी होता कि दान की रक़म आज घट गयी है। मगर अपने खर्च का हिस्सा घट जाने की उसे चिंता न थी।

गंगाराम ने घर पहुँचकर यह इच्छा करते हुए एक नारियल फोड़ा—"मेरी प्रतिज्ञा का भंग न हो और मेरी पत्नी व बच्चे आराम से रहे।" उस दिन से उसकी लकड़ी का व्यापार बढ़ता गया। धीरे धीरे उसने एक मकान बना लिया। पहले से भी ज्यादा दान करते हुए अपनी पत्नी और बच्चों के साथ आराम से दिन काटने लगा। अब सब लोग उसे 'गंगाराम जी' पुकारने लगे।

गंगाराम के मकान के पास एक अमीर का घर था। उसकी समझ में यह बात न आयी कि वह उससे भी बढ़कर कैसे दान ज्यादा करता है और यश पाता है! उसके मन में गंगाराम के प्रति ईर्ष्या पैदा हुई और उसकी हालत पर उसे आश्चर्य भी हुआ।

एक दिन अमीर ने गंगाराम से पूछा— "सुनो गंगाराम, तुम दिन ब दिन तरक्की करते आ रहे हो। मुझे बड़ी खुशी हो

रही है। यदि तुम बुरा न मानो तो मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ! क्या तुमको जंगल में कोई निधि मिल गयी?"

"नहीं साहब, ऐसी कोई बात नहीं। यह सब एक मुनि की कृपा है।" भोले गंगाराम ने सारी बातें अमीर को सुनायीं।

"तब तो तुम्हारे पास दो और नारियल हैं? कैसे भाग्यवान हो, तुम? मुझे उनको देखने का कुतूहल है। कल तुम्हारे घर आऊँगा, दिखा सकते हो?" अमीर ने पूछा। गंगाराम ने भी मान लिया।

दूसरे दिन अमीर एक टोकरी में एक साधारण नारियल छिपा कर गंगाराम के घर गया। गंगाराम के नारियलों की बड़ी देर तक जाँच की। उसकी आँख बचाकर उनमें से एक नारियल लिया और उसकी जगह अपना नारियल रखकर चुपके से घर लौट आया।

अमीर ज्यादा धन पाने की इच्छा प्रकट करने का निश्चय करके उस महिमावाले नारियल को फोड़ना ही चाहता था कि इतने में उसकी पत्नी आकर बोली– "अजी, नारियल का पानी इस लोटे में डाल दीजिये।"

अमीर को अपनी पत्नी को देखते ही "दरिद्र" कहने की आदत थी। आदत के मुताबिक़ उसने "बहुत-सा धन चाहिए।" कहने के बदले "बहुत-सा दरिद्र चाहिए" कहकर नारियल फोड़ दिया।

इसके बाद अमीर ने अपनी गलती समझ ली और पत्नी को खूब गालियाँ सुनायीं। लेकिन भूल हो चुकी थी। इस वजह से अमीर की संपत्ति धीरे-धीरे खतम होती गयी। एक दिन लुटेरों ने उसके घर को लूट लिया। आखिर उसकी यह हालत हुई कि उसे गंगाराम के घर जाकर दान भी लेना पड़ा।

अमीर ने तब गंगाराम के घर जाकर नारियल चुराने का अपना अपराध स्वीकार किया और उससे क्षमा माँग ली।

गंगाराम ने उस पर रहम खाकर कहा–"मेरे पास जो दो नारियल हैं, उनमें एक महिमावाला नारियल भी बचा है। आप चिंता न कीजिये। उसे आप के वास्ते फोड़ देंगे।"

इस तरह गंगाराम की मदद से अमीर पहले से भी अधिक धनवान बना। वह भी गंगाराम की तरह दान करते बड़ा नामी हो गया।

सपना सच हुआ

एक राजा ने अपनी राजधानी के सबसे मशहूर सुनार को बुलाकर उसके हाथ थोड़ा सोना और दो हीरे देकर दो अंगूठियाँ बनाने का आदेश दिया।

सुनार उन चीज़ों को ले अपनी दुकान में लौट आया। उसके पास राघव नामक एक युवक सुनार का काम सीख रहा था। उसने उस युवक से कहा–"अरे राघव, राजा ने दो अंगूठियाँ बनाने का आदेश दिया है। मैं घर जाकर खाना खा के लौट आऊँगा, तब काम शुरू करूँगा। तुम तब तक इन चीज़ों की रखवाली करो।" यह कहकर सुनार खाने के लिए घर चला गया।

मालिक के घर जाने के थोड़ी देर बाद राघव को गहरी नींद आयी। वह सामनेवाली मेज पर सर टिकाकर बेखबर सो गया।

उसी समय राजा वेश बदल कर नगर में घूमने निकला। राजा ने देखा कि सुनार की दूकान में काम करनेवाला राघव सो रहा है। राजा ने दूकान में प्रवेश करके राघव की पीठ पर ज़ोर की मार लगायी और बाहर चला गया।

"अरे बदतमीज़, तुम कौन हो? तुमने मेरे बढ़िया सपने को बिगाड़ दिया।" ये शब्द कहते राघव जाग पड़ा।

राघव की बातें राजा ने सुन लीं। राजा अपने महल को लौटा, तब राघव को पकड़ लाने अपने सिपाहियों को भेजा।

राघव राजा के सामने हाज़िर किया गया। "सुनो, तुमने दूकान में कौन-सा सपना देखा?" राजा ने राघव से पूछा।

"महाराज, जब तक वह सपना सच न निकले, तब तक मैं बता नहीं सकता।" राघव ने जवाब दिया।

ऊर्मिला भण्डारी

"नहीं बताओगे तो तुम कठिनाइयों में फँस जाओगे!" राजा ने चेतावनी दी।

"आप भले ही मुझे मार डालिये, लेकिन मैं बता नहीं सकता।" राघव ने साफ़ कह दिया।

"इसे अंधेरी कोठरी में डाल दो।" राजा ने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी।

राघव को अंधेरी कोठरी की ज़िंदगी बड़ी मुश्किल मालूम हुई। फिर भी राजा के दुबारा पूछने पर उसने अपने सपने की बात नहीं बतायी। राजा ने फिर उसे अंधेरी कोठरी में भेजते हुए आदेश दिया—"इसको आज से खाना-पानी भी मत दो।"

राघव ने अंधेरी कोठरी से भाग जाने की कोशिश की। उसे एक छोटी-सी लाठी हाथ लगी। उसने उस लाठी की मदद से एक सुरंग खोद डाली और सुरंग से बाहर आया। पास में ही राजमहल था। एक खिड़की का किनारा पकड़कर वह ऊपर चढ़ा और एक कमरे में पहुँचा।

वह कमरा राजकुमारी का था। राजकुमारी एक चारपाई पर लेटी थी। उसके निकट एक मेज़ पर सोने की थाली में खाना भरा था। राघव दबे पाँव गया। खाना खाकर उसने राजकुमारी को देखा। वह बड़ी सुंदर थी। राघव के मन में राजकुमारी के प्रति प्रेम पैदा हुआ।

राघव उस कमरे में से बाहर जा ही रहा था कि राजकुमारी ने आँखें खोलकर उससे पूछा—"तुम कौन हो? मेरे कमरे में प्रवेश करने की हिम्मत तुमने कैसे की? मैं अपने पिताजी से कहकर तुम्हारा सर कटवा दूँगी।"

"राजकुमारी, मेरी जान लेने के लिए तुम्हारे पिता की जरूरत ही क्या है? वह काम तुम अपने हाथों से क्यों नहीं करती? तुम्हें क्या पता कि मैं तुमसे कितना

प्यार करता हूँ?" राघव ने हिम्मत के साथ कहा ।

यह बात राजकुमारी को लग गयी । उसने राघव का सारा समाचार जान लिया । राघव ने बड़ी देर तक राजकुमारी के साथ अपना समय बिताया, फिर उसी रास्ते अपनी अंधेरी कोठरी में चला गया ।

उस दिन से लेकर राघव हर रात को राजकुमारी के पास जाता, उसके साथ भोजन करके अपनी कोठरी में लौट आता ।

इन्हीं दिनों में राजा के सामने एक बड़ी समस्या पैंदा हुयी ! एक दिन उस देश के सम्राट ने राजा के पास अपने दूतों को भेजा । दूतों के साथ तीन घोड़े थे ।

"महाराज, आप इन घोड़ों की उम्र बताइये या हमारे साम्राट के हाथों में हार मान लीजिये । ये दोनों शर्तें आपको पसंद न आवे, तो हमारे सम्राट स्वयं आकर आपके राज्य का सर्वनाश करेंगे ।" दूतों ने राजा को समझाया ।

राजा के दरबारियों में से कोई भी घोड़ों की उम्र बता न सका । राजा ने अपनी बेटी से पूछा । उसका उपाय जानते हुए भी राजकुमारी ने राजा से न बताकर राघव को बताया ।
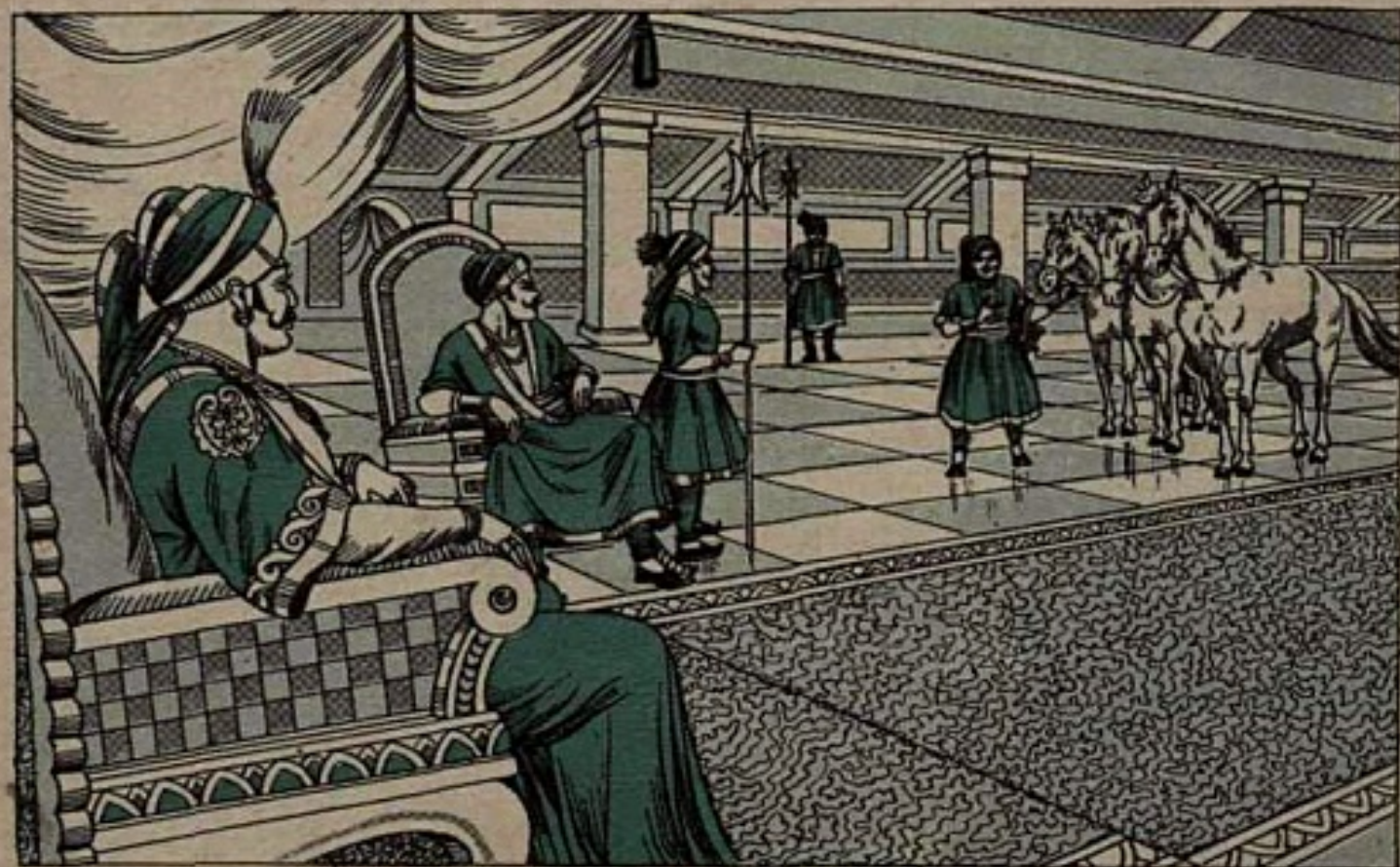
राजा को अचानक राघव की याद आयी। राजा ने भटों को यह आदेश दे भेज दिया कि अगर राघव जिंदा हो तो उसे हाजिर करे।

राघव राजा के सामने हाज़िर किया गया, वह जिंदा ही न था, बल्कि हट्टा-कट्टा भी था। राजा ने उससे पूछा—"क्या तुम इन घोड़ों की उम्र बता सकते हो?"

"मैं बता सकता हूँ, महाराज, लेकिन पहले उनको जौ खिलाइये।" राघव ने जवाब दिया।

तीनों घोड़ों के सामने जौ रखा गया। एक घोड़े ने सारा जौ खा डाला, दूसरे ने आधा खाया तो तीसरे ने यूं ही मुंह चलाया, पर खाया नहीं।

"महाराज, पहले घोड़े की उम्र तीन साल की, दूसरे की दो साल और तीसरे की एक साल की. उम्र है।" राघव ने बताया।

सम्राटों के दूत यह मानकर चले गये कि राघव का कहना सही है।

दूतों के जाने पर राजा ने राघव से पूछा—"तुम तो अभी जवान हो, तुम्हें कई साल जीना है, अब भी सही, तुम अपने सपने की बात बता दो, मैं तुम्हें छोड़ दूंगा।"

"महाराज, क्षमा कीजिये। मैं अभी उस सपने की बात नहीं कह सकता।" राघव ने जवाब दिया।

राजा ने राघव को अंधेरी कोठरी में भिजवा दिया।

एक साल बीत गया। सम्राट के दूत फिर आ धमके। इस बार वे तीन फल ले आये। यह बताया कि इन फलों की उम्र न बताने पर राजा को अपनी हार स्वीकार करनी पड़ेगी। तीनों फल एक समान थे। उनकी उम्र बताना किसी के लिए संभव न था। राजा ने अपनी बेटी से पूछा।

पर राजकुमारी ने जानते हुए भी वह उपाय राजा से न बताकर राघव को बताया।

लाचार होकर राजा ने राघव को फिर बुला भेजा और पूछा—"क्या तुम इन फलों की उम्र बता सकते हो?"

राघव ने पानी मंगवाकर तीनों फलों को पानी में डाल दिया। एक फल पानी के नीचे जा बैठा। दूसरा आधा डूब गया, तीसरा फल तैरता रहा।

"महाराज, पहले फल की उम्र एक साल की, दूसरे की दो और तीसरे की तीन साल की उम्र है।" राघव ने उत्तर दिया।

सम्राट के दूत राघव के जवाब को सही मान कर वहाँ से चल दिये।

"राघव, तुम बेकार क्यों जेल में सड़ते हो? अपने सपने की बात बताकर मुक्त हो जाओ।" राघव से राजा ने पूछा।

"महाराज, आप बार बार मुझ से यह सवाल क्यों पूछते हैं? आप जानते हैं कि मैं अभी बतानेवाला नहीं हूँ।" राघव ने उत्तर दिया।

राजा ने राघव को फिर अंधेरी कोठी में भेज दिया।

एक साल बीत गया। इस बार सम्राट के दूत बारह बच्चों को लेकर आ पहुँचे और पूछा—"महाराज, इनमें कौन लड़के हैं और कौन लड़कियाँ हैं, बता दीजिये, वरना अपनी हार मान लीजिये।"

सब बच्चे एक ही तरह की पोशाकें पहने थे। उन्हें यह पहचानना मुश्किल था कि उनमें कौन लड़के हैं और कौन लड़कियाँ!

इस बार राजा कांप उठा। राजा ने इस बार भी राजकुमारी से पूछा कि इन्हें पहचानने का कोई उपाय बता दो। पर राजकुमारी ने वह उपाय राजा से न बताकर राघव को बता दिया।

इस बार भी राजा ने राघव को अंधेरी कोठी से बुलाया और पूछा–"इन बच्चों में से लड़के और लड़कियों को तुम अलग कर सकते हो?"

"मैं अलग करूँगा, महाराज! लेकिन पहले आपको यह वचन देना होगा कि मैं जो मागूंगा, सो आप देंगे।" राघव ने पूछा।

"माँग लो, तुम मेरा राज्य भी माँगो तो मैं देने को तैयार हूँ। इस राज्य का नाश न हो, मैं यही चाहता हूँ।" राजा ने कहा।

"मैंने सुना है कि आपके एक सुंदर पुत्री हैं। उनके साथ मेरा विवाह करना होगा!" राघव ने पूछा।

"अगर यह आफ़त टल गयी तो मैं ऐसा ही करूँगा।" राजा ने वादा किया।

राघव ने सब बच्चों को भोजन करने तैयार हो जाने को कहा। उनके हाथ साफ़ करने के लिए गरम पानी मंगवाया। बारह में से छे बच्चे गरम पानी से हाथ धोने में घबरा गये, बाक़ी छे बच्चों ने बड़ी खुशी से गरम पानी से हाथ साफ़ किया। राघव ने यह बताया कि पहले छे बच्चे लड़के हैं, बाक़ी छे लड़कियाँ हैं।

"राघव सच कहता है।" यह कहकर सम्राट के दूत राजा से छुट्टी लेकर चले गये।

राजा ने अपनी पुत्री के साथ राघव का विवाह करके उसे अपना दामाद बनाया।

इस बीच सम्राट के मन में यह विचार आया कि उसके द्वारा भेजी जानेवाली समस्याओं का हल जो करता है, उसके नाश होने पर ही राजा उसके अधीन हो जायगा। इस लिए सम्राट ने राघव को अपनी राजधानी में निमंत्रित कर कहा–"मेरे दूतों ने बताया कि तुम बड़े ही अक्लमंद हो! मैं तुम्हारी अक्लमंदी की परीक्षा लेना चाहता हूँ। इस लोहे के टुकड़े से तुम तीन दिनों के अन्दर एक रेशमी वस्त्र बुनकर ले आओ! अगर तुमने

तीन दिन के अन्दर यह काम किया तो मैं अपनी पुत्री के साथ तुम्हारा विवाह करूँगा, नहीं तो तुम्हारा सर कटवा दूंगा, समझें!"

राघव को साफ़ मालूम हो गया कि सम्राट ने उसे मार डालने की चाल चली है। कोई उपाय बताने के लिए भी तो उसकी पत्नी पास नहीं है। वह यही सोचते राजमहल के बगीचे में टहल रहा था। तभी सम्राट की बेटी ने आकर पूछा—"तुम क्यों चिंतित हो?"

राजकुमारी ने इसके पहले ही राघव को देख अपने पति के रूप में उसे वर लिया था। राघव ने जब यह कहा—"सम्राट ने मेरे हाथ एक लोहे का टुकड़ा देकर उससे एक रेशमी वस्त्र बुनकर देने की आज्ञा दी है।" सम्राट की पुत्री ने उपाय बताया। राघव ने सम्राट से यही पूछा। सम्राट ने चकित होकर कहा—"बालू को कैसे धागा बनाया जा सकता है?"

"सम्राट! लोहे से रेशमी वस्त्र कैसे तैयार किया जा सकता है?" राघव ने पूछा।

"तुम जीत गये। मैं अपनी पुत्री के साथ तुम्हारा विवाह करूँगा।" सम्राट ने खुशी के साथ कहा।

राघव सम्राट की पुत्री के साथ विवाह करके लौटा और राजा से कहा—"महाराज, मैंने उस दिन दूकान में जो सपना देखा, वह अब बताता हूँ। मैं उद्यान वन में था। मेरे एक तरफ़ आपकी पुत्री और दूसरी ओर सम्राट की पुत्री बैठी हुई हैं! अगर मैं यह सपना उसी दिन आप से बता देता तो क्या वह सच होता?"

"राघव, तुम विवेकशील हो! सम्राट के दामाद बन गये हो, इसलिए मेरे राज्य के लिए दुश्मन का डर न होगा। अब तुम्हीं गद्दी पर बैठो।" इन शब्दों के साथ राजा ने राघव का राज्याभिषेक किया।
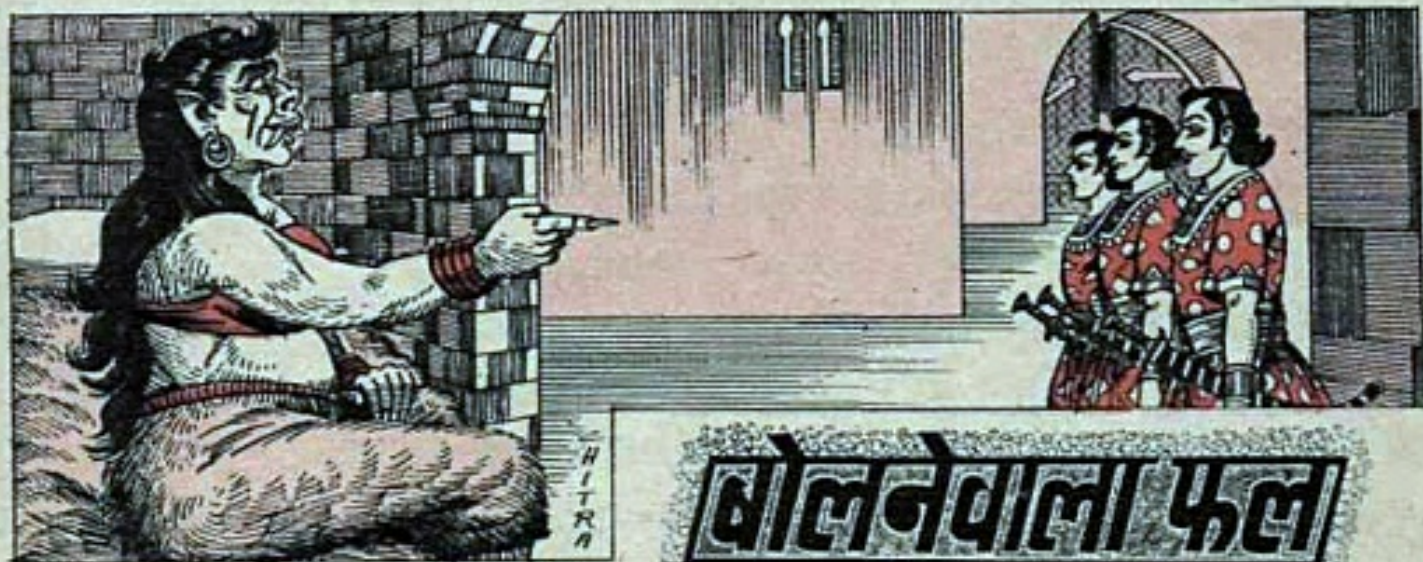
बोलनेवाला फल

एक राजा के पास हज़ारों गायें थीं। रोज़ मवेशी उन गायों को पहाड़ी प्रदेश के चारागाह में चराने ले जाते थे। मगर शाम को लौटने पर उनकी संख्या घटती जाती थी। राजा ने कड़ा पहरा बिठा दिया, फिर भी गायें कम होती जाती थीं। धीरे धीरे गायों की संख्या काफ़ी घट गयी। राजा ने अपने तीनों बेटों को गायब होनेवाली गायों का पता लगा लाने भेज दिया।

राजकुमार गायों की खोज में दिन भर यात्रा करके शाम तक एक जंगल में पहुँच गये। वहाँ पर उन्हें एक विकृत आकृतिवाली औरत दिखाई दी। उसने राजकुमारों से पूछा—"बेटे, तुम लोग कहाँ जा रहे हो?"

राजकुमार खीझकर बोले—"हम चाहें जहाँ भी जायेंगे, तुम्हें क्या मतलब? तुम अपने रास्ते चली जाओ।"

वह औरत कुछ गुनगुनाते चली गयी। राजकुमार और आगे बढ़े, अंधेरा फैलते-फैलते वे एक क़िले के पास जा पहुँचे। उन लोगों ने देखा, क़िले के भीतर उनकी गायें बंधी हुई हैं। अन्दर जाकर देखते क्या हैं, एक बहुत ही बूढ़ी राक्षसी सो रही है। राजकुमारों की आहट पाकर वह जाग पड़ी।

राजकुमारों ने हिम्मत करके पूछा—"नानी जी, हमें कोई काम दिला दो, हम यहीं रह जायेंगे।"

राक्षसी ने समझ लिया कि ये लोग गायों को हाँक ले जाने आये हुए हैं। वह बड़ी चालाक थी। अपने शरीर की ताक़त के जवाब देने के बाद वह कोई न कोई युक्ति करके अपने दुश्मनों को मारा करती थी। उसने राजकुमारों को भी किसी उपाय से मारने का निश्चय करके कहा—

जगदीश खन्ना

"अच्छी बात है, बेटे! गायों को दुहने का वक़्त हो गया है। तुम लोग दूध दुहकर ले आओ। कल से मेरी गायों की देखभाल तुम लोग करेंगे।"

राजकुमार बड़े-बड़े बर्तनों में दूध दुहकर ले आये।

बूढ़ी राक्षसी दूध गरम कर रही थी। राजकुमार बाहर आकर गायों को छुड़ाने के बारे में सोचने लगे।

इतने में राक्षसी ने उनको अन्दर बुलाकर कहा–"बेटे, तुम लोग भूखे मालूम होते हो, पहले ये दूध तो पी लीजिये।" ये शब्द कहते उसने तीन पात्रों में ज़हर मिलाये दूध आगे बढ़ाया। राजकुमारों को यह बात मालूम न थी। इसलिए वे उस दूध को पीकर मर गये। राक्षसी ने उन तीनों को एक पेटी में छिपाया।

अपने बेटों को कई दिनों तक लौटते न देख राजा चिंतित हो उठा। राजा के मवेशियों में गोविन्द नामक एक नौ जवान था। उसने हिम्मत करके राजा से पूछा–"महाराज, मुझे आज्ञा दीजिये। मैं खोये हुए राजकुमार और गायों का पता लगाकर लौट आऊँगा।" राजा ने उसे अनुमति दे दी।

गोविन्द भी उसी रास्ते से चला, जिस रास्ते से राजकुमार गये थे। उसे भी वही विकृत आकृतिवाली स्त्री दिखाई दी और पूछा–"बेटा, तुम कहाँ जा रहे हो?"

गोविन्द ने उसे अपनी सच्ची बात बता दी।

इस पर उस औरत ने समझाया–"यहाँ से थोड़ी दूर और आगे बढ़ोगे तो तुम्हें एक क़िला दिखाई देगा। उसमें एक ठगनेवाली बूढ़ी राक्षसी है। मेरी बहन की मदद से उसी ने राजा की गायों को हड़प लिया है। अपनी ज़रूरत के पूरा होते ही उसने मेरी बहन को मार डाला है। अब तक

उसने तुम्हारे राजा के बेटों को भी मार डाला होगा। मैं उन्हें यह बात पहले ही बतलाना चाहती थी, लेकिन मैंने उनसे कारण पूछा तो वे लोग खीझकर चले गये।"

गोविन्द ने उस औरत से पूछा-"तुम्हारी बहन कौन है? उस राक्षसी ने हमारी गायों को क्यों चुराया?"

इस पर कुरूपिनी ने समझाया-"बुढ़ापे में उस राक्षसी के लिए पेट भरना मुश्किल हो गया। उसकी आँख तुम्हारे राजा की गायों पर पड़ी। मेरी बहन एक जादूगरनी है। उस राक्षसी ने न मालूम कैसे, मेरी बहन से दोस्ती की। उसने मेरी बहन को लालच दिया कि उसे राजा की गायों में आधा हिस्सा दिया जायगा। उसने बहन की मदद से गाय हड़पकर उसे मार डाला। बेक़सूर मेरी बहन को मारने से मैं उससे बदला लेना चाहती हूँ। मैं भी बूढ़ी हो गयी हूँ। मेरी मंत्र-शक्ति कभी खतम हो गयी है। तुम जैसे लोगों की मदद से मैं उस राक्षसी से बदला लेना चाहती हूँ।"

सारी बातें सुनकर गोविन्द ने पूछा-"उस राक्षसी के जाल से हमारे राजकुमारों और गायों को छुड़ाने का कोई उपाय हो तो बता दो।"

"मेरी कई मंत्र-शक्तियाँ तो जाती रहीं, मगर दो शक्तियाँ अभी बच रही हैं।" इन शब्दों के साथ कुरूपिनी ने एक फल और तीन कंकड़ देकर कहा-"यह फल तुमको होनेवाले खतरे का समाचार पहले ही सुना देगा। यह बोलनेवाला फल है। इससे जब तुम्हारा काम पूरा हो जायगा, तब इसका बीज निकालकर पानी में घिसा दो और उस जल को मरे हुए लोगों पर छिड़क दो तो वे लोग जी उठेंगे। इन कंकड़ों को नीचे गिराकर तुम जो माँगोगे, वही तुम्हें मिल जायगा। मुझे उम्मीद है

कि तुम राक्षसी को मार डालोगे। अब तुम हो आओ।"

उन चीजों को लेकर गोविन्द क़िले की ओर रवाना हुआ। बूढ़ी राक्षसी को देख उसने अपने लिए कोई काम माँगा।

राक्षसी ने भाँप लिया कि यह भी गायों को छुड़ा ले जाने आया है। "अच्छी बात है, तुम मेरी गायों की देखभाल करो।" ये शब्द कहकर बूढ़ी राक्षसी अन्दर चली गयी। दूध लाकर प्यार से बोली–"बेटा, तुम पहले यह दूध पी लो, भूखे मालूम होते हो! फिर मैं तुम्हें काम समझाऊँगी।"

"दूध मत पिओ! उसमें जहर मिला हुआ है।" फल ने गोविन्द को चेतावनी दी।

राक्षसी की आँख बचाकर गोविन्द ने दूध फेंक दिया।

दूध पीकर भी गोविन्द को जीवित देख राक्षसी चकित हो गयी और बोली–"बेटा, वहाँ पर बिस्तर लगा है, जाकर सो जाओ।"

"तुम उस बिस्तर पर न लेटो। खाई में गिर जाओगे।" फल ने गोविन्द को चेतावनी दी।

राक्षसी के जाने पर गोविन्द ने बिस्तर उठाकर देखा तो उसमें काँटों से भरा एक गहरा कंदक है। गोविन्द की दूसरी बार भी जान बच गयी। इसलिए वह बहुत खुश हुआ। राक्षसी यह सोचकर बेफ़िक्र सो गयी कि गोविन्द मर गया होगा।

गोविन्द रात भर सोया नहीं। वह सारे क़िले में राजकुमारों को ढूँढ़ता रहा। आखिर एक जगह उसे राजकुमारों की लाशोंवाली पेटी दिखाई दी। उस कुरूपिनी की बहन की लाश बहुत ढूंढने पर भी कहीं दिखाई न दी। इसलिए गोविन्द ने सोचा कि अब उसे उस फल की जरूरत न होगी। उसके बीज निकालकर पानी में

घिसा दिया। उस पानी को राजकुमारों पर छिड़क दिया। वे तुरंत जीवित हो उठे और गोविन्द को पहचान लिया।

इसके बाद चारों गायों को छुड़ाकर उनको हाँकते क़िले को पार कर गये। गोविन्द ने कुरूपिनी की खोज की, पर वह उसे कहीं दिखाई न दी।

इस बीच राक्षसी जाग पड़ी। गोविन्द के बिस्तर को ज्यों का त्यों सुरक्षित देख उसे शक हुआ। गायों की शाला में जाकर देखा तो वहाँ पर गायें न थीं। यह सोचकर वह क़िले से बाहर आयी कि गोविन्द गायों को छुड़ा ले गया है।

राजकुमार और गोविन्द ने भी राक्षसी की चिल्लाहट सुनी। वह बड़े-बड़े डग भरते निकट चली आ रही थी। गोविन्द को उन कंकड़ों की याद आयी, उसने एक कंकड़ फेंकते हुए कहा–"सामने दूर तक कंटीली झाड़ियां फैल जायें।"

कंटीली झाड़ियों में फँसी राक्षसी बड़ी मुश्किल से उसे पारकर आगे बढ़ने लगी। उसके निकट आने पर गोविन्द ने एक कंकड़ और फेंका। तुरंत राक्षसी आग की लपटों के बीच फँस गयी। उन लपटों के बुझने तक वह वहाँ से हिल न सकी। इस बीच में राजकुमार तथा गोविन्द बहुत दूर निकल गये।

तीसरी बार राक्षसी को अपने पास आते देख गोविन्द ने तीसरा कंकड़ फेंका। दूसरे ही क्षण वह एक नदी में गिरा। नदी में बाढ़ आयी। राक्षसी ने उसे पार करने की कोशिश की, लेकिन बाढ़ बढ़ती गयी और राक्षसी उसमें बह गयी।

शाम तक गोविन्द राजकुमार और गायों को लेकर राजा की सेवा में पहुँचा। उसने सारी कहानी राजा को सुनायी। राजा ने प्रसन्न होकर गोविन्द का उचित रूप में सत्कार किया।

करोड़पति

काँचीपुर में एक वैश्य रहा करता था। उसने व्यापार में करोड़ों रुपया बनाया। वह नया कुबेर कहलाया जाने लगा। उसके बहुत-से लड़के और लड़कियाँ थीं। उसने दामादों को भी अपने घर ही रखा। उनको भी काम पर रखा। इस तरह उसने अपना व्यापार और बढ़ा लिया। बन्धु-बान्धवों के बीच वह वैभव से रहने लगा।

परन्तु यह कुबेर घर से बाहर बड़ा लोभी था। उसने दान-धर्म के लिए या मन्दिरों के लिए या देवी देवताओं के लिए कभी कानी कौड़ी भी न खर्ची थी।

एक दिन एक बैरागी, कुबेर के घर के सामने आया। उसने कहा कि उसे एक समय का भोजन दिया जाय।

"अरे, जा बे चोर, तू कहाँ से यहाँ आ मरा है।" कुबेर झुंझलाया।

"यदि मैं चोर ही होता, तो भला मैं तुम्हारे सामने हाथ पसार कर भीख क्यों माँगता?" बैरागी ने पूछा।

दोनों में थोड़ी देर तक यूँ बातें होती रहीं। फिर कुबेर ने यह सोचकर कि वह उसका समय व्यर्थ कर रहा था, उसको नौकरों से बाहर भिजवा दिया। बाहर भेजे जाने पर भी, उस बैरागी ने ज़िद पकड़ी, जब तक उसको खाने-पीने का कच्चा माल न दिया गया, तो वह वहाँ से नहीं जायेगा। वह शाम तक घर के सामने बैठा रहा।

"चाहे तुम यहाँ मर जाओ, तब भी मैं कुछ नहीं दूंगा। चाहे, जितनी देर बैठो।" कुबेर ने क्रोध में आकर कहा। बैरागी तीन दिन, तीन रात, वहीं घर के सामने बैठा रहा। कुबेर से उसके सम्बन्धियों ने कहा कि कहीं, वह बैरागी

लक्ष्मीनारायण दूबे

शाप न दे दें। परन्तु वह डरा नहीं। उसने घर का दरवाज़ा बन्द करवा दिया। वह एक और दरवाज़े से आने-जाने लगा। कुछ दिनों बाद उसने देखा कि बैरागी कहीं चला गया था। कुबेर को ऐसा लगा, जैसे उसने कोई बड़ा मैदान मार लिया हो। पर जब उसने दरवाजा खुलवाया, तो बैरागी फिर आ गया।

"यह बैरागी मेरे पीछे शनि की तरह लगा हुआ है, मालूम करो कि क्यों आया है।" कुबेर ने अपने एक नौकर को भेजा।

"मैं तुमसे कुछ माँगने नहीं आया हूँ। तुमसे कुछ बात करनी है।" बैरागी ने कुबेर के पास खबर भिजवायी।

कुबेर ने कहला भेजा कि छः महीने तक उससे मिलने के लिए उसके पास समय नहीं है। फिर भी कोई ज़रूरी बात करनी है तो छे महीने के बाद आवे। बैरागी चला गया और ठीक छः महीने बाद आया। कुबेर फिर उसको टालता गया। बैरागी, जब कभी उसे बुलाता, वह आता—इस तरह एक साल बीत गया। यह सोच कि बैरागी की बात उसे सुननी ही पड़ेगी। उसने आखिर उसको बुलवाया।

"मैं एक साल से देख रहा हूँ। माया के कारण, इन पत्नी, पुत्रों और बन्धुओं के कारण, तेरी आँखों में अन्धेरा छा गया है, आँखें खोलकर सचाई देखो। तुम्हें खुद मालूम होगा।" बैरागी ने कहा।

"आत्मीयों को त्यागने का उपदेश देने के लिए ही क्या मेरे पास इतने दिनों से आ रहे हो? तुम्हारे उपदेश की मुझे ज़रूरत नहीं। मैं खुद जानता हूँ कि मुझे कैसा बर्ताव करना चाहिये।" कुबेर ने कहा।

"इनमें सचमुच तुम्हारा एक भी नहीं है। जब तक तुम कमा रहे हो, तब तक ही ये तुम्हारे साथ हैं। उसके बाद तुम ज़िन्दे हो या मर गये हो, यह भी कोई न देखेगा। अगर चाहो, तो मैं यह बात सिद्ध करके दिखाऊँगा।" बैरागी ने कहा।

इसके लिए वैश्य भी मान गया और एक उपाय बताकर चला गया।

इसके कुछ दिनों बाद कुबेर ने यूँ दिखाया, जैसे उसको कोई बीमारी आ गई हो। उसने अपनी पत्नी से कहा—"लगता है, मौत नज़दीक आ गई है। इतने दिन जिया, पर कभी कुछ पुण्य न किया। अगर यह मौत एक साल बाद आती तो क्या अच्छा होता।" वह यूँ कहता कहता अकड़-सा गया। कुबेर की पत्नी घबरायी। उसने वैद्य को बुलवाया, वैद्य आया। वह न बता सका कि क्या रोग था। वह निराश हो चला गया। कुबेर ने अपनी साँस, जिस तरह बैरागी ने बताया था, उस तरह फुला लिया।

उसके यहाँ क़रीब क़रीब दो सौ आदमियों को खाना मिल रहा था। वे सब कुबेर के चारों ओर बैठकर, रोने-धोने लगे। कुछ ने कहा, बड़े बड़े लोग भी मौत से नहीं बच सकते।

ठीक उसी समय बैरागी वहाँ आया। उसने लोटे में दूध लेकर सबको चुप रहने का इशारा करके कहा–"यदि तुम में से कोई इनको जिलाना चाहते हो, तो बताओ। यह देखो औषधी।"

कुबेर की पत्नी वगैरह ने बैरागी के पैरों पर पड़कर कहा–"रक्षा कीजिये! आप जो चाहेंगे, देंगे। इनको यह औषधी देकर जिलायें।"

इस पर बैरागी ने कहा–"पगलो, कोई भी औषधी काम नहीं करती, जब मौत पास आ जाती है! इस औषधी को यदि तुम में से किसी ने लिया, तो वह तुरंत मर जायेगा। उसकी बची आयु के कारण यह मरा आदमी बहुत समय तक जीवित रह सकेगा। जो इसको अपनी आयु देने को तैयार हो, वह इस औषधी को पी जाये।"

कोई नहीं बोला। सब लोग मौन ही बैठे रह गये। कुछ देर देखकर बैरागी ने पूछा–"कोई भी इस आदमी के लिए नहीं मरना चाहता?" कोई जवाब नहीं मिला।

"अरे...अरे, इस आदमी ने आप सब लोगों को सुखी रखने के लिए सारी जिन्दगी बिता दी और परलोक जाने के लिए कोई भी पुण्य न किया और अब एक भी उसके लिए प्राण देने को तैयार नहीं है?" बैरागी ने कहा।

"स्वामी, आँखें खुल गई हैं।" कहकर कुबेर उठ बैठा। सब चकित हो गये। स्तब्ध हो गये।

इसके बाद कुबेर ने अपने बेकार बन्धुओं को भेज दिया। अपनी सम्पत्ति को उसने दान-धर्म और पुण्य कार्यों में लगा दिया। व्यापार अपने लड़कों को सौंप दिया और स्वयं धार्मिक जीवन बिताने लगा।

अर्धरात्रि का समय था। जरासंध को अपने अतिथियों का स्मरण आया। वह यज्ञशाला में प्रवेश करके कृष्ण तथा भीमार्जुन से बोला—"महानुभाव, आप लोग स्नातक हैं। स्नातक फूलमालाएँ धारण नहीं करते और न चन्दन ही लगाते हैं। आपने ये दोनों कार्य किये हैं। अलावा इसके आपके कंधों पर धनुषों के चिह्न दिखाई दे रहे हैं। आप लोगों ने नगर द्वार के जरिये हमारे नगर में प्रवेश नहीं किया। चहारदीवारी को लांघकर आये हैं। आप लोग ब्राह्मणवेषधारी क्षत्रिय मालूम होते हैं। वास्तव में आप लोग कौन हैं? किस कार्य के निमित्त आये हैं? सच-सच बतला दीजिये।"

इस पर कृष्ण ने जवाब दिया—"ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य भी स्नातक हो सकते हैं। हम क्षत्रिय स्नातक हैं। बुजुर्गों का कहना है कि मित्र के घर प्रधान द्वार से प्रवेश कीजिये और शत्रु के घर उस जगह से प्रवेश कीजिये, जहाँ द्वार नहीं होता। तुम हमारे शत्रु हो, इसलिए हम चहारदीवारी लांघकर आये हैं। तुम्हारे साथ हमारा काम बननेवाला नहीं है, इसलिए हमने तुम्हारी पूजा को अस्वीकार किया। हम लोग अपने भुज-बल तथा पराक्रम का तुम्हें परिचय देने आये हैं।"

जरासंध ने शांतस्वर में कृष्ण से कहा—"बहुत कुछ सोच-विचार करने पर भी आप लोगों के प्रति मेरे मन में द्वेष पैदा

२२. पाण्डवों की दिग्विजय

नहीं हो रहा है। अतः मैं आपका कैसे शत्रु बन सकता हूँ? क्या निरपराधी को शत्रु मानना धर्म के विरुद्ध नहीं है?"

"एक महानुभाव ने अपने वंश के धर्म का आचरण करने के लिए तुम्हारे साथ युद्ध करने हम तीनों को भेजा है। अकारण ही अनेक राजाओं को बन्दी बनाकर प्रति दिन एक राजा को भैरव की बलि देनेवाले तुम कैसे निरपराधी हो सकते हो? इससे बढ़कर कौन-सा अधर्म होगा? तुम्हारा वध करके उन राजाओं को मुक्त करने हम आये हुए हैं। तुम जैसे घमण्ड करनेवाले कार्तवीर्य आदि की क्या हालत हो गयी? तुम सभी राजाओं को मुक्त करके अपने प्राणों की रक्षा करो, वरना हमारे साथ युद्ध करके मरने के लिए तैयार हो जाओ। मैं कृष्ण हूँ और ये दोनों भीमार्जुन हैं।" कृष्ण ने समझाया।

कृष्ण की बातें सुनकर जरासंध क्रोध में आकर बोला—"मैंने जिन राजाओं को अपने भुजबल से पराजित किया, उन्हें क्या आप लोगों से डरकर मुक्त करूँगा? मुझ से युद्ध करना चाहते हों तो अपनी सेनाओं को ले आइये। नहीं, तो आप में से किसी एक एक के साथ अथवा तीनों के साथ युद्ध करने के लिए मैं तैयार हूँ।"

इसके बाद जरासंध अपने पुत्र सहदेव का पट्टाभिषेक करके युद्ध के लिए तैयार हो आ पहुँचा।

"हममें से तुम किसके साथ पहले युद्ध करना चाहते हो?" कृष्ण ने पूछा।

जरासंध अपने बल पर गर्व करता था, इसलिए वह भीम के साथ युद्ध करने को तैयार हो गया। और भीम के साथ जूझ पड़ा। दोनों दो हाथियों की भांति मल्ल-युद्ध करने लगे। नगर के सभी लोग उस युद्ध को देखने आये। वह भयं... युद्ध कार्तिक

शुक्ला प्रथमा के दिन प्रारभ हुआ और त्रयोदशी तक चला। चतुर्दशी के दिन ऐसा लगा कि जरासंध एकदम थक गया है। तब कृष्ण ने भीम से कहा—"भीम, जरासंध बिलकुल शिथिल हो गया है। आज उसका वध कर डालो।"

कृष्ण की बातें सुनने पर भीम का उत्साह उमड़ पड़ा। उसने जरासंध को बड़ी आसानी से अपने वश में कर लिया और अति भयंकरता के साथ उसे फाड़कर मार डाला। तब सिंहनाद करते जरासंध के शव को पैर पकड़कर खींच ले गया और राजमहल के द्वार पर फेंक दिया।

इसके बाद कृष्ण तथा भीमार्जुन कारागृह के पास गये और सभी राजाओं को मुक्त किया। गिरिव्रज के सभी ब्राह्मणों ने उन तीनों को हृदय खोलकर आशीर्वाद दिये। बन्धन मुक्त होने पर सभी राजाओं ने कृष्ण की प्रशंसा की। कृष्ण ने उन लोगों से कहा—"युधिष्ठिर राजसूय याग करने जा रहे हैं। आप सबको उनकी सहायता करनी होगी।" सभी राजाओं ने मान लिया।

जरासंध का पुत्र सहदेव नवरत्न लेकर पुरोहित के साथ उनके पास आया। कृष्ण ने उसके उपहार स्वीकार करके मगध के राजा के रूप में उसका अभिषेक किया। तदनंतर कृष्ण जरासंध के रथ पर भीम और अर्जुन को बिठाकर बन्धन मुक्त राजाओं को अपने साथ ले बड़ी शीघ्रता से इन्द्रप्रस्थ को लौट आया। युधिष्ठिर से उन्होंने कहा—"भगवान की कृपा से आपके भाई सकुशल लौट आये हैं। मल्लयुद्ध करके जरासंध भीम के हाथों में मर गया है। ये सब राजा जरासंध के बन्दी थे।" युधिष्ठिर ने उन सभी राजाओं का उचित रूप में सत्कार किया और उन्हें अपने अपने देश को भिजवा दिया। तब युधिष्ठिर

से आज्ञा लेकर कृष्ण जरासंध के रथ पर द्वारका को लौट गये।

कुछ दिन बीत गये। एक दिन युधिष्ठिर से अर्जुन ने कहा–"मेरे पास अपूर्व गांडीव तथा अग्निदेव के द्वारा दिये गये रथ और असाधारण अस्त्र हैं। मैं दिग्विजय करने जाऊँगा और अपार धन लाकर हमारा खजाना भर दूँगा।"

युधिष्ठिर यह बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और दिग्विजय के लिए एक अच्छे मुहूर्त का निर्णय कराया। इसके बाद उत्तरी दिशा में अर्जुन, पूरब की ओर भीम, दक्षिणी दिशा में सहदेव तथा पश्चिम की ओर नकुल को दिग्विजय करने भेजने का उचित प्रबंध किया। युधिष्ठिर इंद्रप्रस्थ में रहकर राज्य का शासन संभालने लगे।

उत्तरी दिशा में अर्जुन अपनी सेना के साथ गया। पहले पुलिंद राजा का सामना करके उसे बड़ी आसानी से हराया। इसके बाद क्रमशः आनर्त, कालकूट, कुलिंद तथा सुमंडल के राजाओं को अपने अधीन कर लिया। शाकल द्वीप का राजा महापराक्रमी प्रतिविंध्य अर्जुन के हाथों में हार गया। प्रागज्योतिष के राजा भगदत्त के सहायक किरात तथा चीनु भी थे। भगदत्त ने आठ दिन तक अर्जुन के साथ युद्ध किया और अंत में मैत्री-पूर्ण संधि कर ली।

अर्जुन ने भगदत्त से कहा–"मेरे बड़े भाई युधिष्ठिर राजसूय याग करके एक विशाल साम्राज्य स्थापित करने जा रहे हैं। इस कार्य के लिए अपार धन की आवश्यकता है। तुम अधिक मात्रा में धन की सहायता करो, इससे बढ़कर मैं तुम से कुछ और नहीं चाहता।" भगदत्त ने अर्जुन को बहुत-सा धन देकर पूछा–"तुम और किसी प्रकार की मदद चाहते हो तो माँगो।"

अर्जुन इस प्रकार अनेक राजाओं को पराजित करते, उनसे उपहार ग्रहण कर

आगे बढ़ा। मार्ग मध्य में किंपुरुष, गंधर्व इत्यादि को हराकर उत्तर कुरु देश के हरिवर्ष नामक राज्य में पहुंचा। उसने उस राज्य को हराना चाहा, पर वहाँ के द्वारपालों ने अर्जुन से कहा–"तुम इस नगर को जीत नहीं सकते, इसलिए अपने देश को लौट जाओ।" द्वारपाल दीर्घकाय तथा महान वीर थे। उन्होंने अर्जुन से उस नगर के संबंध में यों कहा–"इस नगर में जो भी प्रवेश करता है, उसे कुछ दिखाई नहीं देता। मानव शरीर के साथ इस नगर में प्रवेश करना असंभव है। इसलिए तुम बताओ, क्या चाहते हो? हम तुम्हें दे देंगे।"

"युधिष्ठिर राजसूय याग करके साम्राज्य स्थापित करने जा रहे हैं। इसके लिए उपहारों की आवश्यकता है।" अर्जुन ने द्वारपालों से कहा। इस पर द्वारपालों ने अपार धन, रत्नों के ढेर, तरह-तरह के कंबल, अपूर्व वस्त्र, विचित्र प्रकार के हिरणों के चर्म लाकर अर्जुन को उपहार में दिये। इस प्रकार अर्जुन उत्तरी दिशा को जीतकर वापस लौटा और जो संपत्ति लाया था, उसे भण्डार में भर दिया।

पूर्वी दिशा में जाकर भीम ने पांचाल राजा का सत्कार प्राप्त किया। मिथिला नगर के राजा जनक को युद्ध में हराया। दशार्ण के राजा सुधन्वु के साथ युद्ध करके उसके प्रताप की प्रशंसा की और उसे अपना सेनापति बनाया। इसके बाद उसने रोचमान तथा उसके भाइयों को हराया, तब पुलिंद, सुकुमार, सुमित्रों को पराजित कर चेदि देश में पहुँचा।

चेदि देश का राजा शिशुपाल यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ कि युधिष्ठिर साम्राज्य की स्थापना करने जा रहे हैं, भीम को कुछ दिन तक अपने अतिथि

बनाकर उसके लौटते समय राजसूय के निमित्त अपार धन देकर विदा किया।

भीम वहाँ से निकल कर अनेक राजाओं को पराजित करते हुए मगध पहुँचा। मगध के राजा सहदेव से बहुत-सा धन भेंट लेकर उसकी सहायता से पौंड्रक वासुदेव तथा अनेक और राजाओं को हराया। इसके बाद समुद्र तट वासियों से युद्ध करके सोना, चांदी, मोती, मूँगे, चन्दन, रत्न इत्यादि लेकर इंद्रप्रस्थ को अपनी सेना के साथ लौट आया।

दक्षिणी दिशा में सहदेव ने शूरसेन, मत्स्य, पटच्चर, निषाद आदि को पराजित किया और अपने फूफे कुंती भोज के दर्शन करके उनसे बहुत-सा धन लिया। इसके बाद कई छोटे-मोटे राजाओं को हराकर माहिष्मतीपुर पहुँचा। उसके राजा नील के साथ जब सहदेव युद्ध करने लगा, तब सहदेव की सेनाएँ आग में जलने लगीं। यह देख सहदेव चकित रह गया।

सहदेव की सेनाओं के जल जाने का एक कारण था। एक बार माहिष्मती नगर के राजा नील ने अपनी पुत्री को अग्नि के कार्य में नियुक्त किया। अग्निदेव ने उसके सौंदर्य पर मोहित हो, ब्राह्मण का वेष धरकर उसके साथ संगम किया। यह बात जानकर नील ने ब्राह्मणवेषधारी अग्नि को दण्ड दिया। तब अग्नि ने अपना निज स्वरूप दिखाया। नील ने अग्नि के सामने साष्टांग दण्डवत करके उससे क्षमा माँगी। और अपनी पुत्री का विवाह शास्त्रविधि के अनुसार अग्निदेव के साथ किया और अग्निदेव से यह वर प्राप्त किया कि भविष्य में उसे तथा उसके नगर को शत्रु का भय न हो। उस दिन से लेकर जब भी माहिष्मती नगर पर शत्रुसेनाओं का आक्रमण होता अग्निदेव उनको जलाने लगता था।

सहदेव ने दाभों के आसन पर बैठकर होम किया और अग्नि की स्तुति की। इस पर अग्निदेव ने प्रसन्न होकर सहदेव का नील के साथ परिचय कराया और उसे बहुत-सा धन दिलाया।

इसके उपरांत सहदेव और दक्षिण की ओर बढ़ा। कलिंग, ओढ़, केरल, आन्ध्र इत्यादि देशों के राजाओं के पास अपने दूत भेजकर उन्हें वश में कर लिया। समुद्री तटवर्ती राक्षस राजा विभीषण से अपार धन लेकर इंद्रप्रस्थ को लौट आया।

पश्चिमी दिशा में गये नकुल ने रोहितक देश के राजा मयूर को पराजित किया। वहाँ से निकलकर शैरीषक तथा महेत्थ देशों को अपने अधीन कर लिया। दशार्ण, शिबि, त्रिगर्त, अंबष्ठ तथा मालव देश के राजा उसके हाथों में हार गये। मार्गमध्य में और अनेक देशों को पराजित करते हुए द्वारका के पास जाकर नकुल ने अपने आगमन का समाचार कृष्ण को दिया। इसके बाद मद्रदेश पहुँचा, वहाँ से शाकलपुर जाकर अपने फूफे शल्य को राजसूय-याग का परिचय दिया। शल्य ने प्रसन्न होकर नकुल को धन, कनक, वस्तु एवं वाहन दिये। तदनंतर नकुल ने समुद्र मध्य के कई राज्यों को हराया, वरुण के राज्य तथा कृष्ण ने इसके पूर्व जिन राज्यों को हराया था, उन्हें फिर हराया। तब अपार धन लेकर इंद्रप्रस्थ को लौट आया।

चारों भाई चार दिशाओं को जीतकर जो धन लाये, उससे युधिष्ठिर वरुण तथा कुबेर से भी बढ़कर धनी बन गये। इस संपत्ति के आधार पर युधिष्ठिर ने राजसूय-याग प्रारंभ करने का निर्णय किया। युधिष्ठिर के उद्देश्य को समझ कर मन्त्रियों ने भी राजसूय-याग के प्रारंभ करने का उचित प्रोत्साहन किया।

तीन यक्षिणियाँ

[२]

अपने मृत पुत्र को जीवित लौट देख राजा की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। तब राजा ने मंगल से कहा—"मंगल, मैं तुम्हारा ऋण कैसे चुका सकता हूँ? तुम जो चाहो, माँगो। मुझ से हो सका तो दे दूँगा।"

मंगल ने अपने कपड़ों में से एक पात्र निकाला और कहा—"महाराज, मुझे इस तरह के ग्यारह और पात्र चाहिये।"

"यह मेरे लिए नामुमकिन है, मंगल।" राजा ने जवाब दिया।

"तब तो मुझे कुछ और नहीं चाहिये।" यह कहकर मंगल अपने घोड़े पर सवार हो चला गया। कुछ दिन बाद वह समुद्र के किनारे के एक शहर में पहुँचा। आख़िर एक घर के अन्दर चला गया।

घर के मालिक ने मंगल को देख उससे कहा—"बेटा, हम तुम्हारा आतिथ्य नहीं कर सकते। हम लोग खुद भूखे हैं। इस शहर में तुमको कहीं भी मुट्ठी भर खाना न मिलेगा। इस देश में अकाल आया है।"

"मैं आप लोगों से खाना नहीं मागूँगा।" ये शब्द कहते मंगल ने अपना अंगोछा निकाल कर ज़मीन पर बिछाया, उस पर छड़ी से मारकर कहा—"खाना परोसो।" तुरंत थालों में बढ़िया खाना सज गया।

"आप घर भर के लोगों को खाने के लिए बुलाइये।" मंगल ने घर के मालिक से कहा। मंगल की मेहर्बानी से घर भर के लोगों ने भरपेट खाना खाया।

"इस देश में अकाल पड़ने का क्या कारण है?" मंगल ने घर के मालिक से पूछा।

"हमारे देश में पर्याप्त मात्रा में अनाज पैदा नहीं होता, इसलिए हम समुद्र के उस पार से मंगवाते हैं। मगर कुछ दिन पहले एक अदृश्य हाथ ने हमारे अनाज भरे जहाजों को डुबोकर हमारे देश में अकाल पैदा कर दिया है। हमें बिलकुल नहीं सूझता कि क्या करना है?" घर के मालिक ने कहा।

"मैं जानता हूँ कि क्या करना है। मुझे आप अपने राजा के पास ले जाइये।" मंगल ने कहा। दोनों राजा के पास पहुँचे।

"महाराज, मैं आपके अनाज भरे जहाजों को सुरक्षित पहुँचवा दूंगा। बदले में आप मुझे क्या देंगे?" मंगल ने राजा से पूछा।

"तुम जो माँगोगे, सो दूँगा।" राजा ने कहा।

मंगल चालीस जहाजों को ले जाकर उनमें अनाज भर के लौट रहा था। अचानक एक औरत का हाथ समुद्र से ऊपर उठा। उस हाथ में सोने का एक कड़ा था। मंगल ने उस हाथ को पकड़कर झाड़ दिया और उसे ढकेल दिया। वह हाथ तो पानी में डूब गया, मगर हाथ का कड़ा मंगल के हाथ में आ गया।

इसके बाद जहाज़ सुरक्षित उस देश में पहुँचे। अकाल दूर हो गया। लोग सुखी रहने लगे।

राजा ने मंगल से कहा—"माँगो, तुम कौन-सा पुरस्कार चाहते हो?"

मंगल ने अपनी पोशाकों में से एक बर्तन निकालकर कहा—"इस तरह के और ग्यारह बर्तन चाहिये।"

"मैं अपने सारे राज्य को बेच डालूं तो भी ऐसा बर्तन नहीं मिल सकता। चाहे तो तुम मेरी पुत्री के साथ विवाह करो। मेरा राज्य भी दे सकता हूँ, मगर ऐसे

ग्यारह पात्र मैं कहाँ से ला सकता हूँ?" राजा ने कहा।

"मुझे ऐसे बर्तनों को छोड़ कुछ और नहीं चाहिये। मेरे चालीस भाई कारगार में सड़ रहे हैं। उनकी याद करने पर मुझे नींद तक नहीं आती।" मंगल ने बताया।

"मैं तुम्हारी एक मदद कर सकता हूँ। कल सुबह तुम मुझ से मिलो।" यह कहकर राजा ने मंगल को भेज दिया। तब अपने नौकादल के अधिकारी को बुलवाकर पूछा-"तुम यक्ष-राजकुमारियों के भोजन करनेवाले प्रदेश को जानते हो?"

"जी हाँ, महाराज!" नौकादल के अधिकारी ने कहा।

"कल मंगल को अपने साथ ले जाकर उसे वह प्रदेश दिखला दो।" राजा ने आदेश दिया। दूसरे दिन सवेरे मंगल आ पहुँचा। राजा ने उससे कहा-"मैं तुमको यक्षिणियों के भोजन करनेवाले प्रदेश को भिजवा देता हूँ। शायद वे तुमको वे बर्तन दे सकती हैं।"

मंगल अपने घोड़े को अपने स्थान पर छोड़कर राजा की नौका में रवाना हुआ। सात दिन बाद वह समुद्र के उस पार पहुँचा। नौकादल के अधिकारी ने मंगल को दूर का एक क़िला दिखाते हुए कहा-

"सामने जो दिखाई देता है, वही यक्षिणियों का क़िला है।"

मंगल नौका से उतरकर क़िले में जा पहुँचा। क़िले के भीतर एक बूढ़ा रसोई बना रहा था।

"तुम कौन हो? यक्षिणियों के आने का समय हो गया है। वे देखेंगी तो तुम खतरे में पड़ जाओगे, इसलिए उन पर्दों के पीछे छिप जाओ।" रसोइये ने कहा।

थोड़ी ही देर में यक्षराज की कुमारियाँ आ पहुंचीं। रसोइये ने पूछा।

"रसोई तैयार है। क्या परोस दूं?"

तीनों यक्षिणियाँ खाने बैठीं।

एक यक्षिणी ने कहा—"मैंने उन चालीस डाकुओं को सात साल तक पानी पीने से रोक दिया। इतने में किसी युवक ने आकर मेरे हाथ को पकड़ लिया। उसके हाथ से छुड़ाने के लिए मुझे बर्तन से मारना पड़ा। वह कोई बड़ा साहसी मालूम होता है।"

दूसरी यक्षिणी ने कहा—"मेरे मंत्रदण्ड को हड़पकर उस युवक ने मरे हुए राजकुमार को जिलाया। इसलिए वह बड़ा ही हिम्मतवर मालूम होता है।"

तीसरी यक्षिणी ने कहा—"मेरे हाथ को हटाकर अनाज भरे जहाज़ों को ले गया और मेरे हाथ से उस नगर को मुक्त किया, वह कम हिम्मतवर कैसे होगा?"

ये बातें सुनकर पर्दे की आड़ में से मंगल बाहर आया और बोला—"वह युवक अगर तुम लोगों के सामने आवे तो तुम लोग क्या करेंगी?"

"वह जो चाहे, सो देंगी।" तीनों यक्षिणियों ने एक स्वर में कहा।

दूसरे क्षण में तीनों एक साथ मंगल को पहचान कर चकित हो गयीं। इसके बाद उसे अपनी पंक्ति में बिठाकर बोलीं—"पहले तुम हमारे साथ खाना खाओ।"

(अगले अंक में समाप्त)

संसार के आश्चर्य:

१०९. झूलनेवाला पत्थर

ब्यूनोस एरिस (अर्जेंटाइना) नगर के दक्षिणी पहाड़ों में यह विचित्र पत्थर है। इसका वज़न ७०० टन है। फिर भी यदि कोई हिला दे तो वह झूलता है। वायु और वर्षा के कारण इसमें जो चिकनाहट हुई, जिससे यह पत्थर "बैलेन्स" को प्राप्त कर चुका है।

Photo by R. Udaya Bhaskar Rao
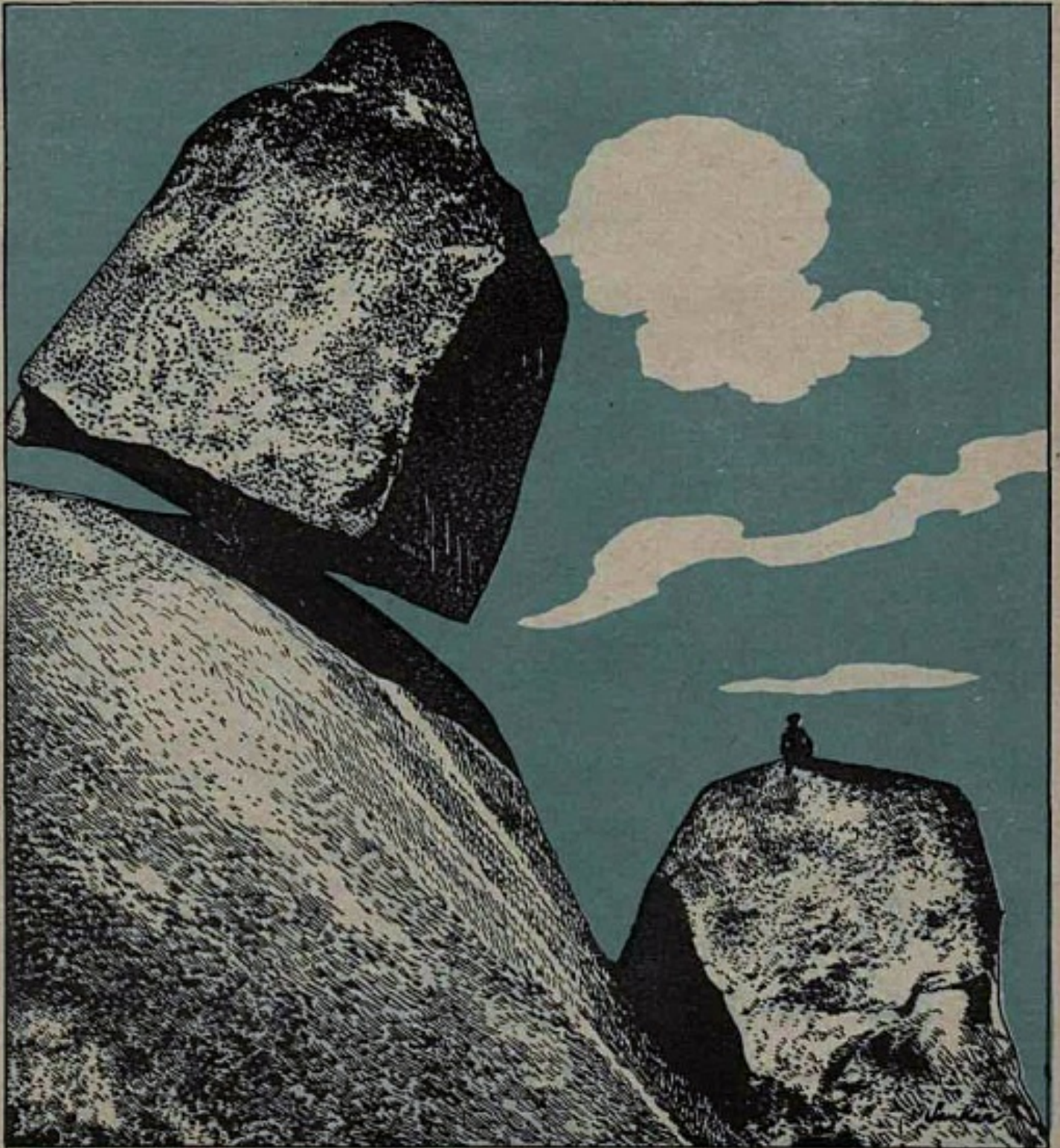
पुरस्कृत परिचयोक्ति

इन दोनों के एक ही रंग।

प्रेषक : जयप्रकाश जैन, भोपाल

Photo by P. B. Khata
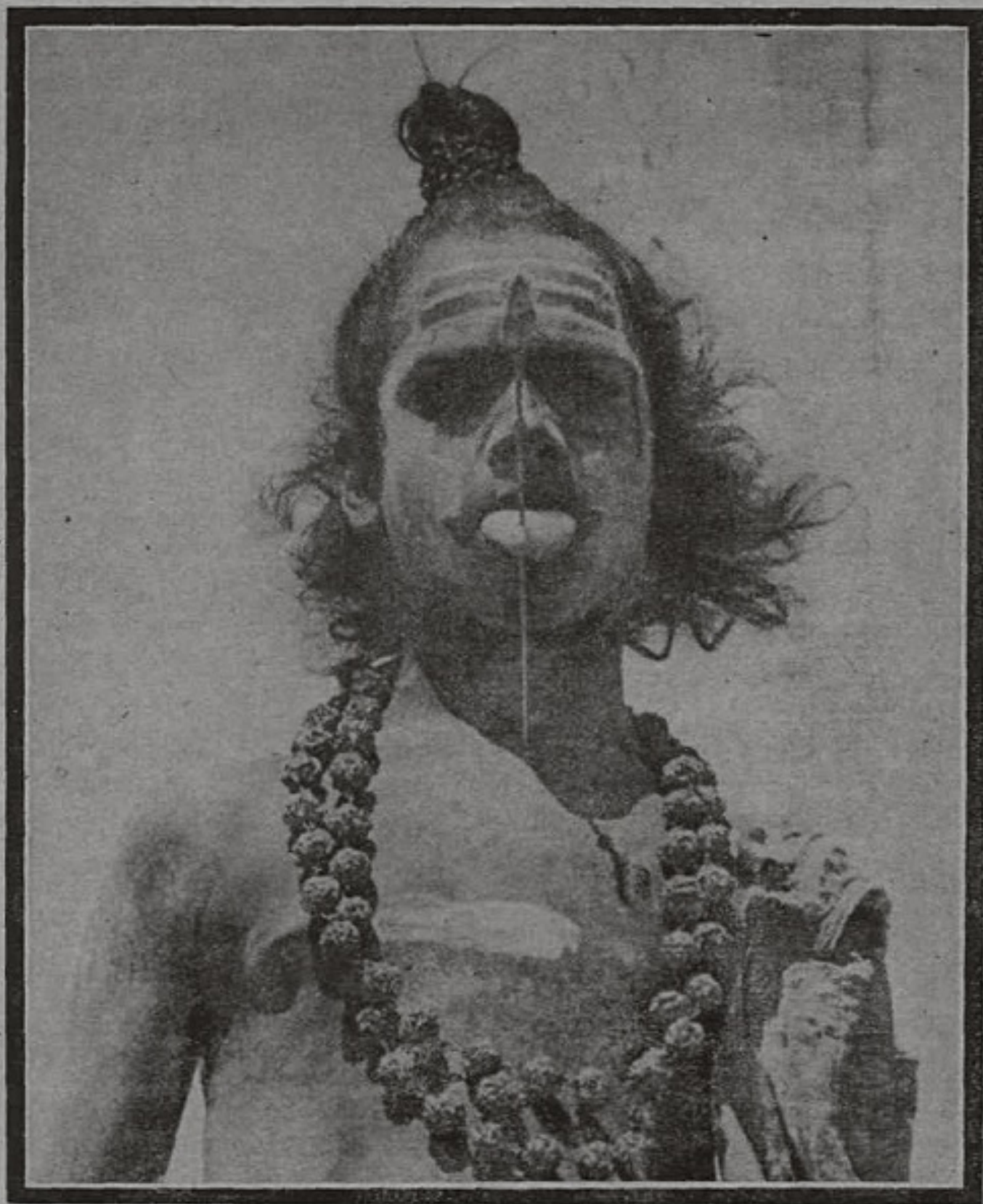
पुरस्कृत परिचयोक्ति

ये सब हैं मांगने के ढंग।

प्रेषक: जयप्रकाश जैन भोपाल

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

मार्च १९७१ :: पारितोषिक २०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ १० जनवरी १९७१ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

जनवरी – प्रतियोगिता – फल

जनवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गयी हैं। इनके प्रेषक को २० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: इन दोनों के एक ही रंग।

दूसरा फ़ोटो: ये सब हैं माँगने के ढंग।

प्रेषक: जयप्रकाश जैन,

द्वारा: जीवनचन्द जैन, बाज़ार जहाँगीराबाद, भोपाल (म. प्र.)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

घर घर की कहानी

शंकरनाथ एक मध्यम वर्ग के परिवार का प्रमुख था। वह एक आदर्श पति और आदर्श पिता था। "चादर जितनी लंबी हो, उतने ही पाँव फैलाने चाहिये।" यह उसके जीवन का सिद्धांत था। अपनी औक़ात के बाहर बेहद बढ़े हुए हौसलों के चक्कर में पड़े मध्यम श्रेणी के परिवार महँगाई के इन दिनों में कैसे तबाह हो रहे हैं, शंकरनाथ खुली आँखों देख चुका था।

शंकरनाथ की पत्नी पद्मा एक आदर्श गृहिणी थी। उनका बड़ा पुत्र रवि हाईस्कूल में पढ़ता था। उससे छोटी बहन रूपा और छोटा भाई राजा भी स्कूल में पढ़ते थे। वह परिवार बड़ा सुखी था।

इससे सर्वथा भिन्न एक और परिवार था—वह साधूराम का था। शंकरनाथ जिस दफ़्तर में मैनेजर था, साधूराम उसी दफ़्तर का हेड़ क्लर्क था। उसके पाँच बच्चे थे। साधूराम के जीवन का तत्व शंकरनाथ के विपरीत था! शंकरनाथ की तनख़्वाह जहाँ सात सौ थी, वहाँ साधूराम की उससे आधी भी न थी। फिर भी उसके पास एक आलीशान बंगला था। उसकी पत्नी जमुना गहनों से लदी थी और उसके बच्चों की हर ख़्वाहिश पूरी हो जाती थी। कैसे?

साधूराम हर जायज़ और नाजायज़ राह पर चलने में झिझकता न था।

इन दोनों परिवारों की आमदनी और खर्च का मेल बैठाने के रास्ते भिन्न थे, एक का सीधा और दूसरे का ठेढा!

तीसरा एक और परिवार था—पद्मा के भाई सीताराम का। उसके सामने आमदनी और ख़र्च में सामंजस्य बैठाने का कोई प्रश्न ही न था। उसके सामने समस्या थी—